R. S.

ओ३म पूर्णमदः पूर्णमिदंः पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❋ मनुष्य बनो ❋

Sep. Dec

वर्ष ३३	आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष संवत २०४१ वि०	अङ्क १२ १ व २

साधु साधन सहज करीजे ॥टेक॥

बिन साधन कुछ हाथ न आवे, साधन भरम मुनी जे ॥ साधु०
जग व्यौहार न हो बिन साधन, परमारथ न बनीजे ॥
संस्कार और कर्म की लीला, फल के रूप पतीजे ॥
जैसी करनी वैसी भरनी, करनी सहित भरीजे ॥
कथनी बदनी काम न आवे, करनी को चित दीजे ॥
माना रूप प्राप्त है अपना, मर्म प्रभाव भुलीजे ॥
बिन साधन यह भमं न जावे, साधन भर्म मिटीजे ॥
साधन सहज है शब्द योग का, उसकी रीति सिखीजे ॥
मन का मैल विकार मिटै जब, तब बिन रूप लखीजे ॥
सहज ही सहज कमाई करना, भव जल पार लखीजे ॥
राधास्वामी की कृपा से, कारज सुफल करीजे ॥

सम्पादकीय

भारत में हजारों धर्म, सम्प्रदाय, पंथ और मत इस समय प्रचलित है। इतिहास बताता है कि एक धर्म या समुदाय वाले ने दूसरे धर्मो या सम्प्रदायों को मिटाना चाहा मगर मिट न सके। अनेक धर्म या सम्प्रदाय होना कोई हानिकारक बात नहीं है। धर्म की स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है। धर्म तो आचरण करना बताता है। जितने धर्म संप्रदाय बनाये गये वह देश काल वस्तु को ध्यान में रखते हुए सुख शान्ती का जीवन व्यतीत करने के लिए बनाये गये। फिर क्या कारण है कि धर्म संप्रदाय आदि के नाम पर उपद्रव या रक्त-पात होते हैं। मूल कारण की ओर कमतर लोगों का ध्यान जाता है। आज प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्म, पंथ व संप्रदाय के जाल में इतना जकड़ा हुआ है कि वह अपने धर्म के अभिप्राय को या ग्रन्थों के तत्व का निज अनुभव नहीं करना चाहता।

अत: मनुष्य जब त्रक अपने आप का अनुभव न करेगा कि तू कौन है कहाँ से आया है तब तक बाहरी भेदभाव, साम्प्रदायिकता को मिटाना असम्भव है।

इस ज्ञान का अनुभव होना अध्यात्म है। यह अनुभव होना किसी विशेष धर्म या सम्प्रदाय की वस्तु नहीं है। किन्तु यह प्राणीमात्र का अधिकार है। चाहे वह किसी देश जाति का वासी क्यों न हो यह ज्ञान या अनुभव निस्वार्थ और निष्काम अनुभवी महापुरुषों के आदेशानुसार चलने पर प्राप्त हो सकता है एवं देश में एकता व शान्ती का बातावरण पूर्णत: बनाया जा सकता है।

निवेदन

इस अंक में हम अपने पाठकों के लिए महर्षि 'शिव' द्वारा लिखा गया उपन्यास 'शाही लकड़हारा' प्रकाशित कर रहे हैं क्योंकि यह उपन्यास ज्यादा पृष्ठों का है। इसलिए हम इसे खण्ड-२ करके ३-४ माह में पूर्ण कर पायेंगे। अतः पाठक गण अपनी अपनी प्रतियां सुरक्षित रक्खें ताकि समस्त प्रतियाँ जुड़ कर पूर्ण उपन्यास का रूप हो सकें।

—स० सम्पादक

क्षमा याचना

गत मास के अंकों को प्रकाशित होने तथा भेजने में हमें कुछ आर्थिक कठिनाइयों एवं प्रेस कर्मचारियों की कमी के कारण देरी हुई है जिसके लिए हम अपने पाठकों से क्षमा चाहते हैं। साथ ही जिन भाइयों ने अपना वार्षिक शुल्क नहीं भेजा है उनसे निवेदन करते हैं कि वे तुरन्त अपना वार्षिक शुल्क भेजने की कृपा करें ताकि आगे आने वाली आर्थिक कठिनाइयों से बचा जा सके और पत्रिका आपको समय से मिलती रहे।

—प्रकाशक

शोक सन्देश

भारत की आत्मा, नारी की श्रद्धा, निर्बलों की अमर प्राण श्रीमती इन्दिरा गांधी प्रधानमन्त्री भारत सरकार की ३१-१०-८४ को नृशंस हत्या से सारा देश स्तब्ध रह गया। आज देश को पहिले से अधिक इन्दिरा जी की आवश्यकता है। देश विषम परिस्थितियों से गुजर रहा हैं। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि हम देश में साम्प्रदायिक सौहार्द्र बनाये रखें तथा नये प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी के हाथ दृढ़ करें ताकि देश की समस्याओं का समाधान सरलता से हो सके।

—सम्पादक

शोक सन्देश

अत्यन्त दुख के साथ सभी सतसंगी भाइयों को सूचित किया जाता है कि महात्मा भूपसिंह (गरीबदास) जो कि पुराने सतसंगी और परम दयाल जी महाराज के परम भक्त थे का उनके गाँव ऊटासानी (जिला अलीगढ) में २४.८.८४ को देहान्त हो गया है।

मनुष्य बनो परिवार तथा सभी सतसंगी भाई उनके देहावसान पर हार्दिक दुख प्रगट करते हैं एवं परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह उनकी आत्मा को शान्ति दे और शोकाकुल परिवार को इस असह्य दुख को सहन करने की शक्ति प्रदान करे। —प्रकाशक

सूचना

परम सन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज १७.११.८४ की सायं काल और १८.११ ८४ को प्रातः काल परम सन्त परम दयाल पण्डित फकीर चन्द जी महाराज के जन्म दिवस के उपलक्ष में मानव कल्याण सभा चन्डीगढ में सतसंग देंगे।

निवेदक — सतसंग स्थल

त्रिलोक चंद — सनातन धर्म मन्दिर सैक्टर २७ डी, चण्डीगढ़

श्रद्धांजलि

श्रद्धारूपिणी, निर्बल एवं दलित वर्गों का संबल, भारत की अमर प्राण, प्रिय दर्शिनी श्रीमती इन्दिरा गाँधी, प्रधानमन्त्री भारत सरकार को नियति के क्रूर प्रहारों ने ३१ अक्टूबर ८४ के कालिमामय दिवस को भारत के जनमानस से बरबस छीन लिया। इस क्रूर नृशंस हत्या काण्ड से इस जगती का दिल चीख उठा और भारत ही नहीं सारा विश्व संतप्त हो कराह उठा कि आज दीन दुखियों की आशा किरण का सूरज लुप्त हो गया।

इस दुखद अवसर पर मैं सारे समाज की ओर से हार्दिक शोक प्रगट करता हूँ भगवान दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

ज्वाला प्रसाद 'अनिल',
महामन्त्री, अ० भा० वैश्य अग्रवाल महासभा, अलीगढ़।

शाही लकड़हारा

प्रथम प्रकरण

राजा रानी की वार्तालाप

राजा दिन को रात कहे तो, रात कहे सब कोय ।
साँच झूँठ का निर्णय नाहीं, हांजीं हांजी होय ॥

ग्रीष्म ऋतु की पूर्णमासी की आधी रात के समय राजस्थान का बलवान और वीर राजा अपनी सुन्दर रानी को साथ लिये हुये महल की छत पर लेटा हुआ है । परस्पर प्यार प्रीति का वार्तालाप हो रहा है । समय खुशी-खुशी में कटता जा रहा है ।

राजा ने कहा—'सुन्दरी ! कोई राग सुनाती तो चित्त सुनकर प्रसन्न हो जाता ।"

रानी ने कहा—"बहुत अच्छा ।"

हाथ में बीना लेली । घुटना टेक कर जमीन पर बैठ गई और सुर मिला कर यह राग गाने लगी :—

दिल दें किसे खुदाया दिलदार सोगये हैं ।
मय हम किसे पिलादें ? मय ख्वार सो गये हैं ॥
बागे जहां के मंजूर, हैरत के हैं तमाशे ।
अक्लो खिरद को खोकर हुशियार सो गये हैं ॥
सोने में मिट गये हैं दुनियाँ के दी के झगड़े
लब बंद हैं सखुन का गुफ्तार सो गये हैं ॥
जी खोलकर मनाले खुशियाँ नफिक्र कर तू ।
यह है घड़ी मुबारक अदबार सो गये हैं ॥

सोने में हाथ आई अमन व अमाँ की दौलत ।
सोये अमीरो उमरा लाचार सोगये हैं ॥
सोने ही में मिली है ऐशोतरब की लज्जत ।
जरदार सो गये हैं नादार सो गये हैं ॥
है वक्त ख्वाब का यह, गुल करदे शमा "अख्तर"
अगयार सो गये है और यार सो गये हैं ॥

राजा ने ठंडी साँस खीची । गहरी साँस ली । जबान से अचानक हाय शब्द निकल गया। शुद्ध पवित्र चरित्रवान रानी के होश उड़ गये। वह हृदय की पवित्र थी। पतिव्रता स्त्री थी। पति की जबान से हाय का शब्द निकलना था कि उसका फूल की तरह खिला हुआ मुखड़ा मुरझा गया। हाथ बाँधकर बोली :-

"महाराज मुझसे क्या अपराध हुआ ? मैंने क्या किया ? अनजाने मुझ से क्या भूल हुई कि आप इतने रुष्ट हो गये ? स्वामी ! मैं आपकी दासी हूं । आपकी सेवा को परम धर्म समझती हूं। आप मेरे सर्वस्व हैं। आप के चन्द्रमुख को चकोर की तरह देखती रहती हूं । आपकी खुशी मेरे जीवन का आधार है । आप हँसते हैं तो मन प्रसन्न होता है। आपकी उदासी से मेरी छाती फटी जाती है । बताइये ! मैंने क्या अपराध किया ? आपके हृदय को मेरी भूल के कारण क्या कष्ट पहुँचा ! मैं आपकी अर्द्धांगिनि हूं। आपके सुख-दुख की साथी हूं। मुझ से अपने हृदय की बात न कहियेगा तो फिर किस से कहियेगा ?"

राजा—"प्रिये ! इससे तुझको कोई लाभ न होगा।"

रानी—"लाभ हो या न हो। जिस प्रकार सूर्य से चन्द्रमा प्रकाश लेता हैं उसी प्रकार पत्नी अपने पति के मुख को देख-कर प्रसन्न होती है। जिस प्रकार सूर्य के अस्त होते ही कमलनी

का मुख कुम्हला जाता है, वैसे ही स्त्री पुरुष को दुखी देखकर दुखी हो जाती है । मेरा धर्म है कि मैं आपके दुख का कारण पूछूँ और उनके दूर करने का उपाय सोचूँ । आपने क्यों लम्बी साँस से आह खींची ? स्वामी ! जब मैं आपके सुख को साथी हूं तो मुझे अपने दुख का भी साथी बनाइये । मैं रह-रह कर पछताती हूं कि मैंने क्या अपराध किया ? आप के खुश करने के लिये गीत गाया । आशा थी कि सुनकर आप खुश होंगे परन्तु परिणाम उल्टा हुआ । कहिये मेरा इस प्रकार सोचना ठीक है या नहीं ?"

राजा--'नहीं प्रिये नहीं । तुझसे कोई अपराध नहीं हुआ । मैं जानता हूँ तू स्त्री धर्म को भली प्रकार जानती है । तू मुझे हृदय से चाहती है । यदि तू अपराध करती तो मैं कठिनता से तेरी ओर झुकता । दूध और पानी में जब खटाई पड़ जाती है तब वे अलग-अलग हो जाते हैं । वैसे ही यदि दो हृदयों में कटुता आ जाती हैं तो वे कभी नहीं मिलते । दर्पण में बाल आया नहीं कि वह बेकार हुआ नहीं । हृदयों में मन मुटाव आया नहीं कि प्रेम का अंत हुआ नहीं ।"

मन मोती और दूध है, इनका एक स्वभाव ।
फूटे से ये ना मिलें, कोटिन करो उपाय ॥

मेरी लम्बी साँस खींचने का कारण कुछ और है ।"

रानी—वही तो मैं सुनना चाहती हूं । दीन अपनी दीनता से घबराता है । इच्छावान अपनी कामनाओं की असफलताओं से दुखी रहता है । सैनाध्यक्ष को अपनी सैना को योग्य बनाने की फिक्र रहती है । राजा अपनी प्रजा की खराबी को देखकर घबराता है । आप पर तो ईश्वर की सब प्रकार से कृपा है । देश फला-फला है । प्रजा प्रसन्न है, सेना सुसज्जित है, खजाना

भरा हुआ है । कुटिल शत्रु आपका नाम सुनकर काँप उठते हैं । न्याय का यह हाल है कि सिंह और बकरी एक घाट पानी पीते हैं । न शत्रु का खटका है न किसी गुप्त रूप से ईर्ष्या करने वाले का डर हैं । आखिर आपने लम्बी सांस खींची तो क्यों खींची ? मैं केवल इतना ही जानना चाहती हूं ।"

राजा—"प्रिये ! जो जो बातें तूने कही हैं सब सच हैं । सचाई में तनिक भी सन्देह नहीं । हाँ, एक बात अवश्य है कि मेरी सदैव इच्छा रहती है कि मैं इस प्रकार का न्याय करता रहूं कि सिंह और बकरी एक ही घाट पानी पीयें । कोई किसी को न सताये न किसी का कोई हक दबाये । इसके अतिरिक्त मुझे कोई चिन्ता नहीं है । इसमें मैं असफलता देखता हूं । प्रयत्न करता हूं रात दिन इसी फिकर में लगा रहता हूं परन्तु उनका कोई नतीजा नहीं होता । यदि कोई शत्रु होता तो अपने बाहुबल से दबा लेता । यदि राज कार्य में मेरे कारण कोई कमी होती तो मैं उसको हजार उपायों से पूर्ति करता ।

रानी—"धन्य महाराज धन्य ! क्यों न हो ? सूर्य कुल तिलक ऐसे ही होते हैं ।"

राजा—"बाहरी शत्रुओं को दबाना सहल है, परन्तु भीतर के शत्रु पर विजय पाना कठिन है ।"

रानी—"महाराज ! भीतरी शत्रु कौन है ? जरा मैं भी तो सुनूँ ।"

राजा—"सुनो, यदि पुत्र दुश्चरित्र है तो पिता को दुख होता है । यदि सेवक बुरा है तो स्वामी को चिन्ता रहती है ।"

रानी थोड़े समय के लिये चिंता मग्न हो गई । उसके मुख से कुछ घडी तक कोई शब्द न निकला । फिर राजा की ओर

सम्बोन्धित हो बोली—"यह कौन सी कठिन समस्या है। यदि सन्तान में दोष है तो उनको अलग अलग किया जाय। यदि सेवक नमक हराम हैं तो उसको निकाल दिया जाये। संसार में जहाँ सहस्रों रोग हैं वहां उन रोगों की औषधियाँ भी है। कोई ऐसी बात नहीं है जिसका उपचार प्रयत्न करने से न हो सके! फटे वस्त्र को बुद्धिमान लोग युक्ति से रफू करते हैं। यदि बुद्धि ठीक है तो कठिन कार्य सुगम हो सकते है। आप तो राजा हैं राजा का कार्य बड़ी जिम्मेदारी और होशियारी का है। उसके सामने हर प्रकार की बातें आती हैं। हर प्रकार के मनुष्यों से काम पड़ता है। बुरे भले सब उसके शासन में रहते हैं। राजा केवल बाहरी जगत का ही शासक नहीं है वरन भोतरी जगत का भी अणिष्टाता व नियम से चलाने वाला है। पहले समय में तो राजा ज्ञानी भी हुआ करते थे। ऋषि मुनि उनसे ज्ञान विद्या सीखने आते थे। वे जप तप, संयम और नियम सबसे जानकारी रखते थे। आपने हाय हाय क्यों की। यदि किसी सेवक से रुष्ट और अप्रसन्न हैं तो उसे हटा दीजिये।"

राजा—सम्मति तो ठीक है मगर करूँ तो क्या करूँ। एक नौकर खराब हो तो उसे निकालूँ। यहाँ तो अबे का अवा ही बिगड़ा है। आदि से अन्त तक सब एक ही तरह के हैं। यदि सबको एक साथ निकाल दूँ तो राज कार्य में विघ्न पड़ जाये। मैं स्वयं ही हैरान हूँ कि क्या करूँ। सब चापलूस खुशामदी और मक्कार हैं। सच्चा एक भी नहीं हैं।"

रानी—"क्या आपके बड़े व उच्च पदाधिकारी भी हाँजी-हाँजी करने वाले हैं? सबके सब खुशामदी हैं? उनमें कोई न्याय प्रिय और सच्चा नहीं है? मेरी समझ में नहीं आता कि

पदाधिकारी कैसे खुशामदी हो सकते हैं ? इनकी जुम्मेदारी नाजुक है ।"

राजा—हाँ जी हां ! सबके सब इसी प्रकार के हैं । इनमें से कोई भी अपनो बुद्धि से काम नहीं लेता । जो मैं कहता हूं वही सुर सब अलापते है । आंख के अंधे नाम नैनसुख ! अगर इतना होता तो भी संतोष था बहुत से अवसरों पर तो इनको स्वतंत्रता पूर्वक काम करने को सेवायें दी जाती हैं परन्तु बे मुँह के बल फिसल पड़ते हैं ।"

रानी—"नहीं महाराज नहीं, ऐसा न कहिए । ये सब लोग आपके राज्य के स्तम्भ हैं । वे सोच विचार के काम करते होंगे । इनमें पक्षपात और संकीर्णता न होगी । खुशामद करना गलती हैं । एक लाठी से सबका हाँकना उचित नहीं है । सबके सब एक से नहीं होते । मान सम्मान व पद पाने से मनुष्यों की बुद्धि ऊँची हो जाती है । कहिये ! मैं सच कहती हूँ या झूँठ ?"

राजा—'सुन्दरी ! मुझ को इतनी समझ बूझ है । मैं अबसर वादो हूं व बारीकियों को पहचानता हूं । कहो मैं भी तुम्हें प्रसन्न करने के लिए हाँजी हांजी करदूँ, परन्तु मैं जानता हूं कि मेरे हृदय में क्या विचार है । प्रायः मेरी प्रजा के न्याय का हनन हो जाता है और जब मैं उसकी सुचना पाता हूं हृदय मैं आग लग जाती है । इसी कारण में दुखो हूँ ।"

रानी—"मुझे प्रसन्न करने के लिये आप सच्चाई का हनन न कीजिए, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि दिल यही चाहता है कि मैं आपकी बातों को सुनकर खुश होती रहूं और हम दोनों एक ही चित्त वृति के बने रहें ।"

राजा–'रानी ! अब तक तुझ को मेरी बातों का विश्वास नहीं

हुआ । इस समय आधी रात है यदि तू कहे तो मैं इन उच्च पदाधिकारियों को बुलाकर तेरे सामने इनका निर्णय कर दूँ । यदि मैं रात्रि को दिन कहूं और शरद ऋतु के चन्द्रमा को सूर्य कह दूँ तो ये सबके सबके सब वही बात कहेंगे और इनमें से कोई भी मेरे विरुद्ध कहने का साहस न करेगा"

रानी—"अर्धरात्रि को केवल राजा को प्रसन्न करने के लिये दिन का दोपहर बताना मूर्खों का काम है । कैसे सम्भव है कि ये लोग इतने चापलूस व खुशामदी बन जायेंगे । वास्तव में यदि वे ऐसे हैं तो उनसे राज कार्य क्या होता होगा ।"

राजा—"ये मूर्ख नहीं हैं । हाँ इनको पढ़े लिखे मूर्ख कह सकती हो । इनमें हर प्रकार की समझ बूझ है परन्तु मुझे प्रसन्न करने व प्रसन्न रखने की चिन्ता में रहते है मैं आग को पानी कह दूँ तो ये इसको पानी कहेंगे । कभी विरोध न करेंगे । जब से इस देश में मुसलमान आये है और उन लोगों ने फार्सी अरबो की विद्या सीखी है तब से ये और भी खुशामदी हो गए हैं।"

आज इन मूर्खो की बातों से मुझे बहुत ही दुःख पहुँचा है और मैं अन्याय के निकट ही पहुँच चुका था परन्तु अच्छा यह हुआ कि मैं संभल गया।"

रानी—"क्या मैं भी इस घटना को सुन सकती हूं ? जिसमें इन धनी और माननीय लोगों ने आपको धोखा दिया है ।"

राजा—"क्यों नहीं ? सुनो—एक तेली ने एक कुर्मी को कुछ रुपये धरोहर के रूप में दिये थे । वायदा था कि वह तीर्थ यात्रा से लौट कर महाजन से अपना रुपया ले लेगा । संयोग-वश वह न जा सका । दूसरे दिन वह अपने रुपये माँगने लगा

कुर्मी अपनी बात से फिर गया। अदालत तक बात पहुँची। तेली गरीब था कुर्मी धनाढ्य था। सब न्यायालयों ने एक सिरे से दूसरे सिरे तक तेली के विरुद्ध निर्णय दिया। अन्त में तेली ने मेरे यहां आकर नालिश की। मैंने अदालतों के निर्णय देखे। सब का मत कुर्मी के मुआफिक था और उस के गवाह भी विश्वासनीय व्यक्ति थे। मेरे मुख से यह निकल गया कि वास्तव में तेली अपराधी है, उसने झूठ मुकद्दमा किया है। मन्त्री, दीवान, सेनाध्यक्ष सब कहने लगे 'हाँ महाराज यह तेली बेईमान है, मैं तेली के विरुद्ध निर्णय देने वाला था कि दिल में एक बात आई कि कुछ दाल में काला है। मैंने पुलिस कर्मचारी को आज्ञा दी कि कुर्मी के खजाने का सन्दूक उठा लाओ। लोग चकित रह गए कि क्या मामला है। जब उसके रुपये दरबार में आए तो मैंने एक एक करके देखा। उसमें कई सहस्र रुपए चिकने थे। कुर्मी को छिपाने का अवसर नहीं मिला था। तब मैंने कुर्मी पर सख्ती की। उसने यह स्वीकार किया कि 'तेली ने रुपया दिया था। मैं बेईमानी से इन्कार करता रहा।" देखो आज ईश्वर ने प्रेरणा न की होती तो न्याय का हनन हो चुका था। इसी कारण से इन कर्मचारियों की ओर से अविश्वास हो गया है। पहिले भी इसी प्रकार बहुत सी बातों का अनुभव हो चुका है।"

रानी—"महाराज ! इसमें मन्त्रियों का क्या अपराध है ? अपराध यदि किसी का है तो न्यायालयों के अधिकारियों का है। इन बेचारों को क्यों अपराधी माना जाता है। न्यायालयों के अधिकारियों को निकाल दीजिए। उनकी जगह विश्वासनीय मनुष्य रखिए। बस छुटटी हो गई।'

राजा—"तू कहती क्या है ? यही मन्त्रीगण और अधिकारी

मेरे दरबार को सम्मति देने वाले और भेद ज्ञाता हैं। बिना इनके परामर्श के मैं कोई कार्य नहीं करता। जिस सभा में यह मुकद्मा निर्णय हुआ था ये उसके परामर्श देने वाले सदस्य थे। इनका अपराध क्यों नहीं है ? जैसे मैं ईश्वर के दरबार में उत्तर दायी हूं वैसे ही ये भी तो हैं। तुम्हारी सम्मति है कि इनको नौकरी से हटादूँ। हजारों को एक साथ कैसे अलग किया जा सकता है ? अभी राज्य का प्रबन्ध बिगड़ जाएगा। यही कारण है कि मेरे मुख से हाय हाय का शब्द निकला"

रानी—"ठीक है महाराज ठीक ! भूल चूक हर मनुष्य से से होती है यह स्वाभाविक है। आपको इतना क्रोध नहीं करना चाहिये। संतोष व सहन शीलता को हाथों से न त्यागना चाहिए यदि मुझसे कोई अपराध अनजाने में हो जाये तो क्या आप क्षमा न करेंगे ? देखिए ना, आज अभी मैं आपके विरुद्ध कहती रही।"

राजा—"तुम्हारी कोई गलती नहीं थी। तुम अपने स्वभाव व विचार के अनुसार परामर्श दे रही थी। यह अपराध तो उनका है जो जान बूझ कर हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं।"

रानी—"यह उदाहरण तो और तरह का था, परन्तु जैसा आपने पहले कहा है कि वे केवल आपके कहने से ही अर्धरात्रि को दोपहर बतायेंगे, ठीक नहीं मालूम होता।"

राजा—"रानी ! चुप रहो, जाने दो इस समय मेरे होश ठीक नहीं हैं। इस पर मैं अब अधिक बात चीत नहीं करना चाहता। यदि मैं चाहूं तो अभी तुम्हारे सामने उन सबको बुलाकर अर्धरात्रि को दोपहर कहलवा दूँ।"

रानी—'मैं इस बात को नहीं मानती। आइये मेरे साथ शर्त

बांधिए । यदि आपकी बात सत्य हुई तो मैं हार मान लूँगीं और जो आप कहेंगे वही करूँगी ।"

राजा—"बहुत अच्छा ! यद्यपि यह मुझे कभी स्वीकार नहीं था कि तुम मेरे साथ शर्त बाँधो और व्यर्थ में झगड़ा मोल लो परन्तु तुम आग्रह कर रही हो इस कारण मैं शर्त बांधता हूं । यदि इन अधिकारियों ने रात्रि का दिन कह दिया तो तुमको बारह वर्ष वन में रहना पड़ेगा ।"

रानी ने समझा कि राजा हँसी में कह रहे है । उसने कहा कि मुझे स्वीकार है । मैं तैय्यार हूँ । बुलाइये, उनको परीक्षा लीजिये ।

राजा—"देखना ! फिर पश्चाताप न करना ।"

रानी—"जी नहीं, मैं कदापि न पछताऊँगी । मैं भी तो देखूँ वे कैसे हाँ में हाँ मिलाते हैं ।"

रानी गर्भवती थो । वह समझती थी कि राजा अपनो गर्भवती रानी को कैसे जंगल में भेज देगा । यह शर्त यों हो हँसी में की जा रही है । उसने कहा देर न कीजिये सबको बुलबाइये । मुझे हर तरह से परीक्षा लेना स्वीकार है ।"

राजा में प्रधान मन्त्री, दीवान, सेना मन्त्री व माल मन्त्रो के पास उसी समय आदमी भेज दिये और कहला भेजा कि एक आवश्यक कार्य है । सब के सब महल में चले आयें ।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

दूसरा प्रकरण

खुशामदी सेवकों की परीक्षा, रानी की हार और उसका देश निकाला

बिना विचारे जो करे, सो पाछे पछताय ।
काम बिगाड़े आपना, जग में होय हँसाय ॥

यह तो सब अपने अपने घरों में लम्बी ताने पड़े हुए थे या राजा के सेवक के आते ही तुरन्त उठ खड़े हुए। चकित हैं कि क्या मामला है ? क्यों बेवक्त बुलाये गए ? दरबारी हमेशा खुशामदी हुआ करते हैं । इनमें लज्जा नहीं होती। स्वाभिमान उनका नाम सुनकर कोसों दूर भागता है। उनका हृदय और मस्तिष्क अपना नहीं। कहने को ये मनुष्य है परन्तु वास्तव में मनुष्य के चोले में पशु हैं या कठपुतलियां हैं जो बाजीगर के हाथों के इशारों पर नाचा करती हैं मशीन का रुख जिधर फेर दो फिर जाता है । दुनियाँ के लोग इनको प्रतिष्ठित समझते हैं इनका सम्मान करते हैं, इनकी बात मानी जाती है परन्तु वास्तव में ये अति के नीच अति के कायर होते हैं । ये गुलामी हैं। गुलामी इनकी घुटी में पड़ी है। ये आत्म हत्यारे किसी काम के नहीं होते। नींद से उठे। वस्त्र पहिने दुम दबाये हुए महल में आये। राजा पलंग पर लेटा हुआ था। रानी चिकों के अन्दर थी। पृथ्वी पर झुक कर प्रणाम किया । राजा ने हंसते हुए सबको पास बिठाया और प्रधान मन्त्री को सम्बोधित करके बोला—"प्रधान जी ! देखो ग्रीष्म ऋतु है। मध्याह्न का समय है। सूर्य की तेजी से बुरी दशा है।

दिल की गर्मी न जायगी हरगिज । लेके पंखा हवा करे कोई ॥

महल में हर प्रकार की सुविधा व आराम का सामान है । भला उन विचारों की क्या दशा होगी जो मारवाड़ की जलती हुई रेत पर पैदल चलते होंगे ? भला बताइये तो क्या करू ।"

प्रधान मन्त्री ने सोचा कि—"राजा रात को दिन बता रहा है न जाने किस कारण ऐसा कहता है । यदि मैं कोई विरुद्ध बात कहता हूँ तो डर है कहीं कुछ न हो जाये । राजाओं के तेज स्वभाव से बचना चाहिए ।"

अच्छा ! जैसा वह कहता है उसी का अनुमोदित करूँ । बोला—"प्राणनाथ सत्य वचन । वास्तव में ऐसी ही गर्मी है । सूर्य से बचना तो सुगम है परन्तु सूर्य की तपती हुई बालू से प्राण बचाना कठिन है ।"

"गर्मी से हाल है बुरा बेशक । ऐसी गर्मी न देखी थी पहिले ॥

तब राजा ने दीवान से कहा – "दींवान जी ! कहिये इस दोपहर की गर्मी में आपका क्या हाल है ? दिल में ठंडक है या भीतर ही भीतर जल रहा है ? मेरा तो ये अनुमान है कि समुद्र के खौलते हुए पानी में मछलियाँ जल भुनकर कबाब हो रही होंगी । जब पानी में ठंडक नहीं तो और चीजों की क्या दशा होगी ?" दीवान ने सोचा कि अब "अब प्रधान मन्त्री राजा की हाँ में हाँ मिला रहा है तो मैं क्या करूँ ? मुझे भी उसी की बात मानना आवश्यक है । हाथ बाँध कर कहा—"पृथ्वीनाथ ! सत्य वचन—

गर्मी की हर चाहर तरफ धूम है ।
अतिशकदा बनी हुई मर्जे बूम है ॥

मन्द सुगन्ध पवन चल रहो है ।
"शीतल मंद सुगंध समीर । पुलकित करती सकल शरीर ।"

तब राजा ने सेना मन्त्री को सम्बोधित कर बोला–आपके हृदय में तो वैसे ही साहस व उत्साह की अग्नि प्रज्वलित रहा करती है । आज इस समय की दोपहर को गर्मी में क्या दशा होगी । आपको तो भीतरी व बाहरी दोनों प्रकार की अग्नि से मुठभेड़ करनी पड़ती होगी ।"

सेना मन्त्री ने हृदय में विचार किया—"क्या बात है क्या उत्तर दूँ क्या न दूँ ।"

अच्छा जो पंचों की राय वही मेरी भी राय । कहने लगा–जगत पति ! सत्य वचन"

महाराज स्नान कर डालिये । शरीर पर चन्दन मलवाइये ठन्डक आ जायेगी ।

तब राजा माल मन्त्री से बोला—"सेठ जी ! आप में तो रुपयों की गर्मी है बाहर भीतर गर्मी ही गर्मी है । क्या उपाय सोचा जाये ? माल मन्त्री ने विचार किया "जब तीन आदमी राजा को सम्मति से सहमत हैं तो मैं क्यों नक्कू बनूँ । हाथ बाँधकर कहा—"लक्ष्मी पति ! सत्य वचन ! सचमुच ऐसा ही गर्मी है कि गर्मी भी गर्मी से त्राहि त्राहि कर रही है ।

राजा ने सब की बात सुनली । चारों को सम्बोधित करके बोला—"तनिक आँगन में बाहर जाकर देखो तो सही मध्यान्ह का सूर्य लाल अँगारे के समान जल रहा है ।" चारों बाहर आये । चमकते हुए चन्द्रमा को देखा जो उनकी मूर्खता व नीचता पर हँस रहा था । साथ ही उस चन्द्रमा के हृदय से

के कारण एक चन्द्रमुखी स्त्री के प्राण घोर संकट में पड़ने वाले थे।

चारों उलटे पाँव लौटे और निर्लज्जता से कहने लगे "अन्नदाता ! सत्य बचन आप कभी असत्य वचन नहीं बोल सकते। सूर्य इतना गर्म है कि आँख ठहर नहीं सकती। बाहर जाकर देखा फिर राज भवन की खिड़की के काले रंग वाले शीशे की सहायता से उसको देखा। वास्तव में वह जलते हुए अंगारे के सदृश है वरन उससे भी बढ़ चढ़ कर है।

सूरज नहीं यह आग का सचमुच तनूर है।
शोलों से गर्म लाख गुना इसका नूर है॥

राजा—"भद्र पुरुषो ! जब इतनी गर्मी है तो आप जल भुन क्यों नहीं गये।"

चारों ने मिलकर उत्तर दिया "प्रान दाता ! हम तो कबके जल भुन कर राख हो गये होते परन्तु आपके चरणों की छाया हमारे ऊपर है इस कारण बच रहे हैं।" राजा की आँखों से टप-टप आँसू की बूँद गिर पड़ी। रानी ने देखा—बाल्मीकि ऋषि ने सत्य कहा है—'विनाश काले विपरीति बुद्धि।

जब समय बुरा आता है मनुष्य की बुद्धि मारी जाती है। वे अपने आपे में नहीं रहते। साधारण मनुष्य साधारण भूल करते हैं। राजाओं की भूल भूलों की राजा होती है। राजा नें डबडबाये नेत्रों से रानी को देखा। "प्रिये ! इस दोपहर की गर्मी से तेरी क्या दशा है ?"

रानी बोली—

न पूछिये कुछ भी हाल मेरा, कि दिल पै सदमे उठा रही हूं।
हरारते दर्दो रंजो गम से, तनो बदन को जला रही हूँ॥

यकीं न करना किसी की बात का, और किसी को न मानना तुम ।

किया जो मैंने वह आगे आया, उसी का फल आज पा रही हूं ।
नहीं सच्चाई है दुनियादारों में, उनमें बूए बफा नहीं है ।
किया भरोसा जो उनके ऊपर, तो मौत के मुँह में जा रही हूं ॥

नाथ ! तुम्हारा एक एक शब्द ठीक था । तुम्हारे कहने में बाल बराबर गलती नहीं थीं ये चापलूस व खुशामदी दर्बारी हाँ में हाँ मिलाने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं जानते । यह समय और अवसर को नहीं पहचानते । इनको इतनी समझ भी नहीं आई कि राजा ने क्या अर्द्ध रात्रि के समय इनको हाँ में हाँ मिलाने को बुलाया था या कोई विशेष बात थी । जो इतनी भी समझ नहीं रखते, उनके हाथ में इतनी बड़ी प्रजा के जान माल को सोंपना बड़ी भूल है । मैं क्या कहूं ? मैं नहीं जानती थी कि मनुष्य में धोका व कपट छल होता है । मुझको यह ज्ञात नहीं था कि मनुष्य व्यर्थ इतना चापलूस हो सकता है । बड़ी भूल की । ये क्या न्याय करेंगे या मनुष्यों के अधिकारों का ध्यान रखेंगे ? मेरी बुद्धि काम नहीं करती । मैं अब तक समझती थी कि सेवक राज भक्त व आज्ञाकारी होते हैं । वे स्वामी को भलाई में सोच समझ से काम लेते हैं परन्तु ये तो इस प्रकार के मनुष्य हैं कि मुर्दा चाहे दोजख में जाये या बहिश्त में उन्हें अपने हल्वे मांडे से काम ।" यह अपना उल्लू सीधा करना जानते हैं । इन पर विश्वास करना मूर्खता है । बुद्धिमान शत्रु मूर्ख मित्र से अच्छा होता है । ये तो वास्तव में पागलखाने में रखने योग्य हैं । मुँह देखी करते है और मुँह देखी कहते है ।"

राजा ने तीव्र स्वर में ठंडी सांस खींची। सब के सब अचंभे में पड़ गये। राज दरबारियों का रंग उड़ गया। वे अब कहीं समझे कि कोई बड़ा अनर्थ हो गया। उनका माथा ठनका परन्तु अब क्या हो सकता था सुमसाम होकर अपने अपराध के बुरे परिणाम देखने की प्रतीक्षा में बैठे रहे। सन्नाटा छाया हुआ था। न कोई किसी से बोलता था न कहता था। राजा ने हाथ उठाया और इस प्रकार ऊँचे स्वर में कहने लगा।

लीला तेरी न्यारी प्रभुजी ! लीला तेरो न्यारी।

ब्रह्मा विष्णु भेद नहिं पावें, नहिं जाने त्रिपुरारी।
माया के बस रहे भुलाने, भटक भटक भटकारो ॥ लीला०
करम जाल और काल चक्र में, निशिदिन जीव दुखारो।
सबहि नचावत नाच अनोखा, राजा रंक भिखारी ॥ ली०

रानी—"महाराज ! अब क्या होगा ?"

राजा—'होना क्या है, जो होना था हो गया। काले वस्त्र शरीर पर धारण करो और बारह वर्ष देश से बाहर वन में रहो। यही शर्त थी। यही वचन थे। परीक्षा हो चुकी। उसका परिणाम देख लिया। अब अपने वचनों को पूरा करो।'

रानी—"महाराज रात्रि का समय है। क्या आप ऐसे निर्दयी और कठोर हो जायेंगे कि मुझ अबला को बिना कुछ अपराध पर देश निकाले का दण्ड देंगे।"

राजा—"नहीं नहीं।"
रघुकुल रीति यही चलि आई। प्राण जायँ पर वचन न जाई।

रानी—"महाराज की आज्ञा सर आँखों पर परन्तु रात्रि

राजा ने ड्यौढ़ीवान को आवाज दी। वह आया। पूछने लगा—"क्या आज्ञा है ?" राजा ने कहा "जाओ, इसी समय काले घोड़ों का रथ तैयार करो। रथ के ऊपर काले रंग का कपड़ा हो और रानी को उसमें बिठाकर बन में छोड़ आओ। यदि वह तुमसे कुछ कहे तो उसकी कुछ न सुनो।"

इधर दर्बान राजा की आज्ञा पाकर रथ तैय्यार करने के लिये बाहर गया उधर रानी के धैर्य पर बिजली गिर गई। "जैसा किया वैसा आगे आया। अपने किये का कोई इलाज नहीं।" रोती हुई कहती है—"प्रान नाथ मैं गर्भवती हूं तुम्हारे राज्य सिंहासन का उत्तराधिकारी मेरे पेट में हैं। कहीं भयानक जंगल में सिंह व हिंसक पशुओं के डर से वह नष्ट न हो जाय वरन आप को अफसोस होगा। केवल इतनी प्रार्थना है कि रात्रि के समय घर से बाहर न कीजिये। प्रातः में खुशी से वन की राह लूँगी।"

राजा—"क्या करूँ ? प्रण से विवश हूँ। तेरी बातें इस समय तीर की तरह कलेजे में पार हो रही हैं। यदि सामर्थ्य होती तो हृदय खोलकर तुझे दिखा देता। अन्दर ही अन्दर आग की चिनगारियाँ ऊँची हो रही हैं और ऊपर उठकर भाप की शकल बना लेती हैं। आँसू बनकर बाहर निकलना चाहती हैं परन्तु मैं रोक लेता हूँ। बाहर आने नहीं देता।"

रानी -"सत्य वचन महाराज ! तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो। मैं जीते जी तुम्हारे वचन को भंग नहीं करूँगी। आप जानते हो कि मैं अबला स्त्री हूं। पेट में बच्चा है। केवल पेट के बच्चे की ममता के कारण ये बहाना ढूढ़ती थी। न इसमें आपका दोष है न इन भोले भाले खुशामदियों का कुछ अपराध है। मेरे बुरे कर्म फल देने पर आये और मैंने आप से शर्त बाँध ली।

तो स्वीकार कीजिये । अपने हाथों की अंगूठी निशानी के लिये दे दीजिये । यदि ईश्वर की कृपा से पुत्र उत्पन्न हुआ तो वह बांह में बँधी रहेगी और उस निशानी से आप उसको पहचान सकेंगे और वह आप का ही लड़का होगा ।"

राजा—"बहुत अच्छा ! लो, यह अंगूठी अपने हाथ में पहिन लो ।" रानी ने काले वस्त्र पहिन लिए । राजा उसको बिठाने बाहर आया । जब रानी रथ में बैठ गई हाथ बाँधकर डबडबाई आँखों से कहने लगीं—"मैं तो आपके नाम के सहारे जीऊँगी या मरूँगी परन्तु आप इस अभागिनी के भुलाने का प्रयत्न करना । मैं दुखी हूं कुछ चिन्ता नहीं । आप सुखी रहें । मैं मरजांऊ कोई हर्ज नहीं, आपको ईश्वर कुशल से रक्खे । भूल जाओ कि कभी मेरे साथ आपका विवाह हुआ था । अच्छा जाइये । महल के भीतर चले जाइये । रथ वालो ! रथ को बन की ओर ले चलो ।"

उधर रथ बन की ओर हाँका गया, उधर राजा महल में जा पलंग पर पड़ रहा । उसकी दशा को कौन किस प्रकार वर्णन कर सकता है । सारे महल में शोक छा गया ।

वह निकली इस तरह अपने वतन से ।
कि हो बुलबुल जुदा जैसे चमन से ॥
खाको ताक मन्जर का उड़ा रङ्ग ।
मुशब्बक दर्द से था सीनिये संग ॥
हजारों आँख से रोता था दरिया ।
हुबाब उसके हुए दीदे सरापा ।

×०००—

तीसरा प्रकरण

बन, पुत्र जन्म और पुरानी स्मृति

जल थल स्थल बन उपबन में, तेरा एक सहारा है।
मात पिता भाई सुत बनिता, तू सम्बन्धी प्यारा है॥

महल छूटा, पति से वियोग हुआ। सखी सहेली छूटीं। रथ का मुख जंगल की ओर है। विधाता! कौन जाने क्षणमात्र में यहाँ क्या हो जाए? किसी बात का ठिकाना नहीं है। मनुष्य किस बात पर भरोसा करे। किसका सहारा ढुढे। पलक मारते ही ऐसा बनाव बन जाता है कि बना बनाया खेल बिगड़ जाता है। रानी उदास है। रथ वाले का हृदय अन्दर ही अन्दर कुढ रहा है। न कुछ कहता है न कहने का साहस होता है।

जंगल नगर से कई मील की दूरी पर था। रथवान ने जाकर उसके बीच में उतार दिया और हाथ बांधकर गिडगिडाने लगा—'माता जी मेरा अपराध क्षमा हो। मैं सेवक हूं। नौकरी तो पूरी करनी ही पड़ती है। यदि नौकर न होता तो आज ऐसा बुरा काम क्यो करना पडता और क्यों पछताना पड़ता! माता! पुरुषों को आपस में लड़ने से दुख नहीं होता परन्तु एक स्त्री के सम्बन्ध में जब कोई अनुचित कार्य करना पडता है तो बड़ा दुख होता है।"

रानी—"भाई। इसमें तेरा तनिक भी अपराध नहीं। तू अपने स्वामी की आज्ञा का पालन किया। बस तेरा इतना ही काम था। जा मुझ को छोड़ जा। तुमको यहाँ ठहरने की आज्ञा

नहीं है ।"

रथवान—"यही तो दुख है । अभी रात्रि शेष है। बन भयानक व डरावना है। मनुष्य दिन दोपहर यहां आकर डरता है। रात्रि का तो कहना ही क्या है। मैं ही इसी धिक्कारणीय कार्य के लिये योग्य समझा गया। मैं ही एक कोमल बदन महल में रहने वाली रानी के देश निकाला का साधन बनाया गया। अभागे पेट ! चाण्डाल पेट ! तुझ पर धिक्कार है। तू न होता तो आज क्यों मैं ऐसा काम करता।"

रानी—"तू व्यर्थ पछतातो है। जो भाग्य में है वह होकर रहता है । इसे मूर्खता कहिये या बुद्धिमानी, रघुवन्शियों में सदैव से ऐसा ही होता आया है। वे अपने बचन के पालन में सब कुछ कर डालते हैं । यदि हरिश्चन्द्र व रामचन्द्र जो इत्यादि ने ऐसा किया है तो युधान नाथ जोधपुर का राजा क्यों न करे।"

रथवान—"माता ! मैं अज्ञानी हूं। आपकी गूढ़ बातों को नहीं समझता । न इतनी बुद्धि है न ज्ञान है, केवल इतना जानता हूं कि बन में इस प्रकार छोड जाना पाप है। आप इस जगह कहां रहोगी ? यहाँ से कहाँ जाओगी ?"

रानी—"जहां दाना पानी होगा वहाँ जाऊँगी। भाग्य में लिखा है वह होकर रहेगा । अब तू लौट जा नहीं तो राजा जी तुझ पर क्रोधित होंगे।"

रथवान—'हाय ! जी तो नहीं चाहता कि आपको अकेली छोड़ कर चला जाऊँ परन्तु विवश हूँ। क्या करूँ ? अच्छा माता जी ! प्रणाम ! ईश्वर आपको भला चंगा रक्खे।"

रानी—"जाओ।"

रथवान तो उलटे पाँव लौट गया। रानी इधर उधर देखने लगी। यह नहीं कहा जा सकता कि वह डरती थी परन्तु गर्भवती होने के कारण वह बड़ी सावधानी से फूक-फूक कर कदम रखने पर विवश थी। चन्द्रमा प्रकाशवान था। तारे भी कहीं कहीं निकले हुए थे, परन्तु इन दोनों का प्रकाश बहुधा जहां बस्ती और आबादी नहीं होती रात्रि को अधिक भयानक बना देती है और जब कभी ऐसे समय में कोई संकट ग्रस्त स्त्री या पुरुष दुख दर्द की तकलीफ से घबराकर बाहर चाँदनी में टहलते हुये अपने दुख को भूलने का प्रयत्न करने लगते हैं तो लोग उनको भूत प्रेत समझते है और उनकी गति (चालढाल) भूत प्रेत की गति समझी जाती है।

जिन पावों ने आज तक मखमल के गद्दों पर रुक-रुक पाँव धरे थे, आज वे नंगे होकर कटीले बन और कांटे दार पगडंडियों से मुठभेड़ कर रहे हैं। जिस कोमल बदन स्त्री को नगर की गली कूँचों का ज्ञान नहीं, वह आज बन के बीच नितान्त अकेली भटकती हुई फिर रही है। यह जोधपुर की रानी है या जंगल रहने वाली गंवारी है। इसके कष्टों का अनुमान कौन कर सकता है। मछलियाँ समुद्र से निकल कर जलती हुई कढ़ाई में डाली जायें। उनसे पूछो कि इस प्रकार के परिवर्तनों के समय हृदय की क्या दशा होती हैं, यों तो ईश्वर की सृष्टि में क्षण क्षण में परिवर्तन होते रहते हैं परन्तु एक हरी भरी बाटिका में बिजली का गिरना और शीघ्र उसका उजड़ जाना अत्यंत ही आश्चर्यजनक घटना है। यह वही बात हुई कि किसी जगह भव्य भवन खड़े हों भूकम्प आया और वे पृथ्वी में धँस गये। न उनका नाम है न निशान है। अब इस जगह एक उबलते हुये गर्म पानी का तालाब जोश में है। रात्रि के समय उस दुखिया और अभागिन स्त्री को देखकर

कौन कहेगा कि यह युधान की पत्नी और जोधपुर की रानी ससार में सब कुछ होना सम्भव है।

विवश यह एक पेड़ के नीचे मन मार कर बैठ गई। मन ही मन सोचती है—हे ईश्वर ! मैंने क्या किया ? जान बूझ कर तो मैंने चीउँटी तक को कष्ट न दिया मुझ पर यह विपत्ति कैसे आयी ? लोग कहते है कि बुरे कर्म का फल बुरा होता है । मेरी समझ में नहीं आता कि मुझ किस बुरे कर्म के कारण यह दन्ड मिला । इसके अतिरिक्त इस अबोध बच्चे ने जिसने अभी तक दुनियाँ नहीं देखी क्या बुराई की जो कि बिपत्ति का निशाना बनाया गया ।

हाले दिल किस को सुनाऊँ हाय हाय ।
अपना गम किस को बताऊँ हाय हाय ॥
मैं वतन से बेवतन यारब हुई ।
किस तरफ और कैसे जाऊँ हाय हाय ॥
जख्म दिल नासूर की सूरत हुये ।
कौन सा मरहम लगाऊँ हाय हाय ॥
ला के पहुंचाया फलक ने किस जगह ।
चैन किस जा चल के पाऊँ हाय हाय ॥
पांटों से तलवे फटे हाय दामन की तरह ।
किससे और क्यों कर सिलाऊँ हाय हाय ॥

हे ईश्वर ! तू दीन दुखियों का सहायक और असहायों का रक्षक कहा जाता है । मेरी रक्षा कर !"

रानी रोती जाती है । हिचकियाँ लग रही हैं । सिसकती है । केवल प्राण नहीं निकलते । उसके कष्टों का अनुमान कौन कर सकता है ।

यदि स्वीकार न हो तो जहाँ तेरा जी चाहे वहाँ तेरे साथ चल कर पहुँचा आऊँगा।"

रानी—"महाराज आपने मुझ निःसहाय को सहायता देकर कृत्य-कृत्य कर दिया। मैं आपके आश्रम में रहूंगी। आपकी सेवा और टहल करूँगी और आपके पवित्र चरणों को देख कर अपने देश निकाले के दुख को भुलाया करूँगी।"

साधू—"ठीक है। उठ मेरे साथ होले।"

रानी साधू के साथ आश्रम में आई। वहाँ आराम के साथ रहने लगी। जिस प्रकार वह अपना जीवन व्यतीत करती थी उसको लिखने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक मनुष्य स्वयं अनुमान कर सकता है कि तपस्वियों के आश्रम में किस प्रकार का जीवन मिल सकता है।

रानी के दो मास बाद पुत्र उत्पन्न हुआ। साधू जो एक अनुभवी पुरुष था, उस पास के किसी गाँव से दो एक स्त्रियों को पकड़ लाया जिन्होंने दाई का काम किया।

राजकुमार देखने में इतना अच्छा नहीं था। साधू ने उनकी जन्म कुण्डली बनाई। उसका नाम अमर कुमार रक्खा और रानी को विश्वास दिलाया कि आयु के प्रथम चरण में इस लड़के पर बड़ी-बड़ी विपत्तियाँ आवेंगी किन्तु अन्त में पुत्र पिता से मिलेगा और उसके धन व राज्य का उत्तराधिकारी होगा।

लड़के की उत्पत्ति से हर्ष व शोक दोनों हुए। हर्ष तो इस बात का कि राजा के राजसिंहासन का उत्तराधिकारी पैदा हो गया और पछतावा यह कि यदि जोधपुर में यह बात हुई होती तो हर्ष मनाया जाता। यज्ञ रचाये जाते। बधाइयाँ होतीं। सेवकों को पारितोषिक दिये जाते। जंगल में किसी को कुछ मालूम ही नहीं हुआ कि यहाँ क्या हुआ क्या नहीं हुआ।

तो भी रानी प्रसन्न थी। साधु उस पर दयालु था। वह घर का सारा काम-काज करती थी और जब कभी अपने राज काज की सुधि आती तो पुत्र का मुख देख कर उनके भुलाने का प्रयत्न करती। इस प्रकार उसके जीवन के कुछ दिन बन में व्यतीत हुए।

चौथा प्रकरण

साधु की मृत्यु, रानी का स्वर्गवास, बच्चे की दुर्दशा।

चलती चक्की देखकर, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबित बचा न कोय॥

साधु का घर कहने को फूँस की कुटिया थी परन्तु जंगल में मंगल का भवन और शान्ती का स्थान था। जिस प्रकार अथाह समुद्र में रात्रि के समय खोये व भटके हुए जहाज रोशनी की मीनारों को देख कर नष्ट होने से बच जाते हैं उसी प्रकार मारवाड़ की मरु भूमि जान से हाथ धोने वाले यात्रियों को इस छोटे और तुच्छ झोंपड़े के कारण अवश्यम्भावी मृत्यु के भय से छुटकारा मिलता था। हर भूले भटके मनुष्य के लिए इसका अतिथि सत्कार का द्वार खुला हुआ था। जो भूखा प्यासा आया, साधु ने उदारता से उसको दो एक दिन के लिए अपना अतिथि बनाया। रानी को भी अतिथि की सेवा करनी पड़ती थी। रानी वहाँ जाकर उदास नहीं थी। प्रातःकाल से सायंकाल तक किसी न किसी कार्य में संलग्न रहती थी। भोजन बनाना, घर की सेवा टहल, साधू के पूजा पाठ की

सामिग्री इकट्ठा करने का यतन, नवोन बच्चे का पालन पोषण इत्यादि स्वयं इस प्रकार के कार्य थे कि उनके हृदय में अकेले बन के दुख का तनिक भी प्रभाव नहीं होता था। रात्रि के समय साधु कथा वार्ताओं को सुनाकर न केबल उनका दिल बहलाता था वरन धार्मिक जीवन के विचारों व बातों से उनके ज्ञान को वृद्धि करता था।

इस प्रकार सुगमता से पाँच वर्ष व्यतीत हो गये। अमर कुमार शुक्लपक्ष की द्वितीया के चन्द्रमा की तरह दिन प्रति दिन बढ़ता गया। जिस समय वह कुटिया के आगे चकोर की चाल चलता हआ खेलता था, साधू व रानी दोनों देखकर हर्षित हो जाते थे। भाग्यशाली था वह साधू कि जिसको बृद्ध अवस्था में एक भोले भाले बालक की निकटता और संगति सम्पत्ति प्राप्त हुई। बच्चे निर्दोषता व सादगी के विलक्षण चित्र होते हैं। उनका हृदय बाग की तरह हरा भरा रहता है और जो कोई उनको देखता है उनके साथ रहता है। उनके अनजाने खेल व तमाशे में भाग लेता है और तोतली बोली सुनता है, वह हर्ष से प्रफुल्लित हो जाता है।

जिस ससय राजकुमार पांच वर्ष का हआ साधू ने उस समय के अनुसार उसको थोड़ी बहुत विद्या सिखाई और वह साधारणतया लिखने पढ़ने के योग्य हो गया। ईश्वर ने उसको सरल स्वभाव प्रकृति दी थी। साधू के सत्संग ने सोने पर सुहागे का काम किया। रानी अपने दुख को भूल गई। उसके लिए जंगल में मंगल का सामान इकट्ठा हो गया परन्तु देश निकाले के नवें वर्ष में उसको एक और प्राणघातक विपत्ति से भेंट करनी पड़ी जिसने उसके साहस को तोड़ दिया।

नवें वर्ष के व्यतीत होने के पश्चात ही एक दिन रात्रि के समय साधू ने रानी को पुकारा। उसने अग्नि जलाई और

साधू के पास आई। उसकी आँखों से अश्रु बह रहे थे। बोला–"बेटी ! अब मैं तुझ से अलग होने वाला हूं।"

रानी–महाराज ! क्या किसी तीर्थ को जाने वाले हैं ? इस वृद्धावस्था में तीर्थ यात्रा करने से बड़ा दुःख होगा।"

साधू—'हां ! मैं उस धाम को जाने वाला हूं जहाँ से लौट कर फिर कोई नहीं आता।"

रानी—'महाराज ! आप यह क्या कह रहे हैं ?"

साधू—"हाँ बेटी हाँ ! अब मेरा समय आ गया है। ईश्वर इच्छा है कि अब तू अकेली रहे। जहाँ तक मैं देखता हूं और मेरी अनुभव शक्ति काम करती है तुझ को जोधपुर लौटने का समय नहीं मिलेगा। इसलिए ऐ बेटी ! तीन वर्ष जो तेरे अज्ञात वास के शेष हैं उनको केवल परमात्मा के सुमिरन में व्यतीत करना ताकि समय पर पछताना न पड़े।"

रानी—"पिताजी ! आपको कैसे मालूम हो गया कि आप संसार को त्याग करने वाले हैं ?"

साधू—"इस बात को मैं छः माह से जानता हूं परन्तु इस कारण नहीं बताया कि तुझे व्यर्थ शोक होगा। प्रत्येक मनुष्य अपनी आने वाली मृत्यु का अनुमान लगा सकता है। यह कोई कठिन बात नहीं है। हृदय की एक विचित्र दशा हो जाती है। इसके अतिरिक्त इन्द्रियों की चेष्टा विशेष प्रकार से ऊपर की ओर बदल जाती है जैसा कि मैंने तुझ को बहुधा अभ्यास आदि की शिक्षा आदि के समय बताया है।"

रानी—"महाराज ! और लोगों को तो मृत्यु के नाम से डर लगा करता है। मैं देखती हूं कि आप प्रसन्न है। मुख ज्योति से चमक रहा है। यदि यह दशा न होती तो मेरा हृदय टूट जाता, क्योंकि अब संसार में आपके अतिरिक्त कोई मुझ

रोते चिल्लाते सबेरा हो गया। सूर्य निकला। तमाम जंगल उसके प्रकाश से प्रकाशित हो गया। पशु पक्षी बोलने लगे। रानी उठ खड़ी हुई और दक्षिण की ओर चली। उसको आशा थी कि जंगल में कोई ईश्वर का भक्त मिल जायेगा और उसकी सहायता से ज्ञात होगा कि वह कहाँ जाकर रहे और क्या करे। आठ बज गये, दस बज गये, बाहर बज गये, सूर्य सिर पर आगया और उसकी किरण बिलकुल सीधी सिर के ऊपर आकर खड़ी हो गई। रानी को खूब भूक लगी। उस जंगल में क्या धरा था? किसी आदमी का निशान तक नहीं न कोई आगे न कोई पीछे।

वहशते दिल ने किया है वह बियावाँ पैदा।
सैकड़ों कोस नहीं सूरते इन्साँ पैदा॥

भूक लग रही है प्यास अलग सता रही है। थकावट अलग परेशान कर रही है पांव सुन्न हो गये हैं। इस जीवन में काहे को इतनी अधिक यात्रा करनी पड़ी होगी, परन्तु न वे पीछे की ओर हटते हैं न एक जगह ठहरने को इच्छुक हैं। पांव आगे ही की ओर बढ़े जा रहे हैं। कोई छिपी हुई शक्ति ऐसी है जो रानी के हृदय को गति देती हुई आगे की ओर ढकेल रही है। चलते चलते दो बज गये। एक बड़ का वृक्ष दिखाई दिया। रानी ने तेजी से पैर बढ़ाये। "डूबने वाले को तिनके का सहारा बहुत होता है। धूप की मारी हुई थी। पेड़ के नीचे कुछ देर बैठ कर दम लेने की इच्छा हुई। पेड़ पर पक्षी किलोल कर रहे थे। एक दो बन्दर एक टहनी से दूसरी टहनी पर कूद जाते थे। उनकी उछल कूद के कारण बड़ के फल बहुतायत से नीचे गिरे। पक्षियों का चहचहाना रानी के कानों के लिये स्वागत के मधुर स्वर से कम नहीं था। वहन पेड़ के नीचे आई। दो चार क्षणों के लिये चुप चाप बैठ गई।

बोला—"अभय हो, चिन्ता न कर, संसार में दुख सुख आते जाते रहते हैं।"

रानी—"कृपासिन्धु ! आपका दर्शन दुख दर्द काटने का अचूक शस्त्र है। आप मनुष्य वेश में ईश्वर की साक्षात दया हैं।

चाह गई चिन्ता मिटी, मन में रही न रेख।
मन बच करम से मानिया, साहब साधू एक॥

साधू—"तू निर्दोष है। मैं तुझ में किसी प्रकार का अपराध नहीं पाता। आश्चर्य इस बात का है कि तू इस बन में किस प्रकार आई ?"

रानी—"वास्तव में महाराज मैं निरपराध हूं, आप का कहना सत्य है। केवल मैं मूर्खता कर बैठी और इस मूर्खता का ही भोग भोगना पड़ा।"

साधू—"वह मूर्खता क्या थी ? यदि तुम्हें कोई कष्ट न हो तो मुझे भी सुना दे।"

रानी ने आदि से अन्त तक सारी कहानी सुना दी। जिस प्रकार राजा ने अपने दर्बारियों की परीक्षा ली, जैसे रानी ने शर्त बाँधी और परीक्षा के सत्य होने पर शर्त के अनुसार उसको देश निकालने की बात स्वीकार करनी पड़ी।

साधू हँसा—"काल भगवान की सृष्टि में सब कुछ हो सकता है। पुत्री ! यहाँ से निकट ही मेरी कुटिया है। वहाँ मेरे अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं रहता। केवल दो एक गाय बैल हैं। यदि तू चाहे तो जिस प्रकार सीता ने बाल्मीकि के आश्रम में रहकर अपने दिन काटे थे इसी प्रकार तू भी बारह वर्ष की अवधि को पूरा कर सकती है; किन्तु हाँ, वहाँ महलों जैसे आनन्द और सुख नहीं मिल सकते। यदि तू वहाँ रहना स्वीकार करे तो अपनी पुत्री समझ कर तेरी रक्षा करूँगा और

शान्ति स्वरूप से मुझे भी शान्ति मिल रही है और अपने स्त्री-पने के स्वभाव तक को भूल गई हूं।"

साधू—'बेटी !

जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द।
कब मरि हों कब पाइहों, पूरण परमानन्द॥

मुझ को किस बात का दुख हो। न कुछ किसी को देना है न कुछ किसी से लेना है। यह मैं पहले ही से जानता हूं कि दुनियाँ आनी जानी है। जो आया वह गया। जो पैदा हुआ वह मरा। जिसका आदि है उसका अन्त है। फिर मैं क्योंकर दुखी हूं।

लाई हयात आये कज़ा ले चली चले।
अपनी खुशी न आये न अपनी खुशी चले॥

बेटी ! सुन :—

राम नाम एक साँच है, झूँठा सब सब संसार।
सारा जगत असार है, राम नाम इक सार॥

जो लोग आसक्ति में अनासक्ति और अनासक्ति में आसक्ति का जीवन व्यतीत करते हैं वे ओस की भाँति ऊपर से आते हैं और दो चार घण्टे के बाद ऊपर को ही लौट जाते हैं। घास व पत्तों पर न अपना निशान छोड़ जाते हैं न उनके प्रभाव साथ ले जाते हैं। इस आश्रम में तुझको अच्छी अच्छी शिक्षायें मिली हैं, उनको न भूलना।"

रानी—"कृपा सागर ! यूँ तो मुझे आपके उपदेश और आपके सुमिरन से जी को ढारस रहेगा। यदि हो सके तो इतना बताते जाइये कि भविष्य में आपकी अनुपस्थिति में किसका सहारा ढूँढूँ ?"

साधू—"सहारा तो बेटी ईश्वर का है। वह अनाथों का

निर्धनों का रक्षक है। उसके अतिरिक्त किसी का सहारा नहीं। मनुष्य से किसी प्रकार की आशा रखना भूल है। वह आज है कल नहीं है। रहा रहा न रहा न रहा। अनित्य से क्यों इतना भारी लगाव रक्खा जाये। क्यों न सीधे उसी से लौ लगाई जाये।"

सब का दाता राम है सब का है कर्त्तार।
स्वामी सब का राम है, सेवक सब संसार॥
एक भरोसा एक बल, एक आस विश्वास।
स्वांति सलिल गुरु चरण हैं, चातक तुलसीदास॥

रानी—"सत बचन महाराज ! मनुष्य को किसी मनुष्य की आशा पर निर्भर न रहना चाहिए। माता पिता जनम के साथी हैं करम के साथी नहीं। भाई बहिन धन धौलत के साथी हैं निर्धनता के नहीं। पति और पतिनी निरोगता के साथी हैं रोग के नहीं। कृपा सागर ! शोक है सब कुछ खो कर जीवन में एक आप का सहारा मिला था। अब वह भी हाथ से निकला जा रहा है। क्या वश है !"

साधू—"चिन्ता न कर जिसने माता के गर्भ में तुझको खाने को दिया था, जिसने माँ की गोद में तुझे दूध पिलाया था, जो क्षण २ तेरी सँभाल करता रहा था, अन्त में जिसने तुझको इस आश्रम में पहुंचाया है वह स्वामी सोया हुआ नहीं है। यदि उसने पहले तेरी रक्षा की है तो अब भी तेरी रक्षा करेगा।"

रानी—"कृपा निधान ! और जो कुछ मेरे योग्य सेवा हो, बताइये।"

साधू—"क्या सेवा और क्या बे सेवा। जब हँसा शरीर से

करो।"

आज कल के बीच में, जंगल होगा बास।
ओरे-ओरे हल फिरें, ढोर चरेंगे घास॥
हाड़ जलें ज्यों लाकड़ी, केस जलें ज्यों घास।
सब जग जलता देखकर, भये कबीर उदास॥

बेटी! आज एक घंटे बाद मैं तुम दोनों से अलग हूंगा। मेरे शव को जलवा देना। यही अन्तिम कथन है और राम नाम की रट लगाते रहना यह अंतिम उपदेश है। जब जी घबराये कबीर साहिब की बानी का पाठ करना। इस आश्रम में आराम की पूर्ण व्यवस्था व सामिग्री मौजूद है। तुमको कहीं आने जाने की आवश्यकता नहीं है न किसी बात का खटका है। सब तुमको साधू की पुत्री व ब्रह्मचारिणी समझते हैं, कोई कष्ट नहीं देगा। अच्छा जाओ कुमार को ले आओ, उसको एक दृष्टि से देख लूँ।

रानी गई, राजकुमार को जगाया। वह आँख मलते हुए उठा। माता उसका हाथ पकड़े हुए साधू के पास लाई। लड़के ने प्रणाम किया। साधू ने आशीर्वाद दिया। फिर कुछ समय तक यूँ ही दोनों बात चीत करते रहे। समय कहते सुनते व्यतीत हो गया। साधू ने कहा कि अब विदाई का समय निकट है और वह धीरे धीरे यह भजन गाने लगा।

हमारे प्रभु अवगुन चित न धरो। सो हमारे प्रभु०
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो।
दोउ आय मिले गंगा में, सुरसरि नाम परो॥ हमारे प्रभु०
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो।
सो दुविधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरो॥ हमारे प्रभु०
इक माया, इक ब्रह्म कहावत, सूरश्याम झगरो।

के याको निर्वाह करो प्रभु, के प्राण जात टरो ॥ हमारे प्रभु० राम २ हरे राम कृष्ण २ हरे कृष्ण राम कृष्ण हरे हरे ।

यह कहकर साधू ने अंगड़ाइयां लो । आँख की पुतलियाँ नाचने लगी । बदन अकड़ने लगा ।

उसके मुख से एक बार राम नाम निकला और शरीर गति हीन हो गया ।

यह मृत्यु थी या किसी नाटक का खेल था । आश्चर्यवत इस खेल को देखतो रहो । जब शरीर की गति बंद हो गयो, उसके सिर पर दुख का पहाड़ टूट पड़ा । आँखों से आँसू निकलने लगे । नौ वर्ष का लड़का इतनो समझ बूझ रखता था कि क्या होगया । दोनों फूट २ कर रोये । ईश्वर ने एक सहारा दिया था वह भो हाथ से जाता रहा । दोनों ने आकाश को ओर हाथ ऊँचे उठाये—

न रुला हमको भी इतना तू रुलाने वाले ।
न सता खोल के दिल हाय ! सताने वाले ॥
जो मिला मिल के रुलाता ही रहा दुनियाँ में ।
नजर आये न कहीं आह हँसाने वाले ॥
तख्तो ताज हुआ माययें दिल अपना सभी ।
अब है क्या जिसको लुटायेगा लुटाने वाले ॥
कौन "अख्तर" है यहाँ कहता खुदा से जाकर ।
ले बचा जुल्म के हाथों से बचाने वाले ॥

दोनों साधू के शव पर गिर पड़े । लड़के को तो इतना शोक नहीं था परन्तु रानो की दशा बुरी थी ।

दिल जिगर है पारा पारा हाय हाय ।
डूबा किस्मत का सितारा हाय हाय ॥
जिन्दगी की किश्ती है गरदाब में ।

दूर है कासों किनारा हाय हाय ॥
छुट गये गमख्वार व हमदर्द व रफीक ।
लुट गया सामान सारा हाय हाय ॥
दूर हैं सब भाई बंद और यारो खवेश ।
हमको हो किसका सहारा हाय हाय ॥
जीने के लाले हैं ऐ ! मेरे प्रभु ।
मरने का भी हो इशारा हाय हाय ॥

बेचारे क्या करते । सन्तोष किया । माँ बेटे शव को उठा कर बाहर ले गये । जंगल से लकड़ियाँ चुनकर लाये । उससे मृतक का जलाया और साधारण रूप से उसका मृतक संस्कार किया ।

रानो की इच्छा थी कि देश निकाले के शेष दिन आश्रम में व्यतीत करे, मगर अनुभव से यह सिद्ध हुआ कि वहां बिना किसी पुरुष की सहायता से रहना कठिन था । विवश कुछ दिनों के पश्चात उस स्थान को छोड़ दिया । घूमते फिरते एक नगर के निकट पहुँचे । बस्ती से थोड़ी दूरी पर एक छोटा सा झोंपड़ा बनाया । माँ बेटे उसी में रहने लगे । रानी घास छील लाती । पुत्र बाजार में लेजाकर बेच आता । इसी प्रकार कुछ समय व्यतीत हुआ ।

कुछ समय के पश्चात देश में घोर अकाल पड़ गया । लोग बिना दाना पानी मरने लगे । इनसे चारों पर भी विपत्ति आई परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही समय में विपत्ति सहते सहते रानी का स्वास्थ्य बिगड़ गया । कई दिनों तक वह बीमार पड़ी रही । अज्ञान बच्चा क्या कर सकता था । निदान वह मृत्यु का ग्रास हुई और लड़के को अनाथ छोड़ गई ।

इस प्रकार एक रानी का महल से निकाला जाना, तुच्छ

जीवन व्यतीत करना और इसी प्रकार निराश्रय मरना एक अत्यन्त ही शिक्षा प्रद और दुखद घटना है। संसार में जो न हो जाये सो थोड़ा है।

मृत्यु से पहले विपत्ति ग्रस्त रानी ने एक चिट्ठी लिखी। उस में अपने पति की अँगूठी रख दी। पुत्र से कहा कि इस चिट्ठी को कपड़े में मँढ़ाकर बाँह पर बांध रखना और जब अवसर हाथ आवे उससे लाभ उठाना। लड़के ने चिट्ठी तो लेली और उसको संभाल कर अपनी बाँह में बांध लिया परन्तु उसको पढ़ने का अवसर नहीं मिला। अबोध और अल्पायु था। उसको ध्यान भी नहीं आया कि देखूँ इसमें क्या लिखा है।

मरने से एक दिन पहले रानी ने पुत्र को उपदेश दिया था- "किसी से भिक्षा न लेना और न किसी से भिक्षा माँगने का प्रयत्न करना। अपने बाहु बल से परिश्रम करके कमाना और हक हलाल की कमाई पर निर्भर रहना क्योंकि जो ईमानदारी से उपार्जित अन्न नहीं खाते उनका हृदय अशान्त रहता है और उच्च कोटि की वे बातें जो मनुष्य को संसार में सफल बनाती हैं, नहीं पैदा होतीं। यदि तू परिश्रम करता रहेगा तो ईश्वर तेरी सहायता करेगा। मैं वास्तव में पति वियोग के दुख से घुली जा रही हूं। मुझे और किसी प्रकार की चिन्ता नहीं है।

रानी को लड़के से केवल इतनी ही बात कहने का अवसर मिला था। इससे अधिक कहना उसने उचित नहीं समझा। वह जानती थी कि यदि ईश्वर को इसकी भलाई स्वीकार है तो किसी न किसी दिन इसके शुभ कर्मों के संस्कार उदय होंगे और व उन्नति कर जायेगा।

रानी परलोक सिधार गई। लड़के ने उसकी मृत्यु पर बहुत शोक मनाया। परन्तु अब क्या हो सकता था। सन्तोष किया

और यह सोचने लगा कि अब किस प्रकार निर्वाह करना चाहिए। विचार करते-करते यह बात समझ में आई कि जंगल से लकड़ी लाकर शहर में बेचूँ और जो कुछ मिले उसी से उदर पूर्ति करूँ। लड़का परिश्रमी था। काम काज से नहीं घबराता था। जंगल में गया और वहाँ बहुत सी लकड़ियाँ काटी।

पाँचवां प्रकरण

बालक लकड़हारा—लोभीलाल

काल करम अति प्रबल हैं, सिहऊ होइ शृगाल।
काल करम के कारने, सिंह खिचाई खाल॥

जंगल से कटी हुई लकड़ियों का बोझ सिर पर लिये हुए नया लकड़हारा नगर में आया। उसने जंगल में जो पेड़ काटे थे वे चंदन के थे। चंदन की लकड़ी कठिनता से हाथ आती है। यह भाग्य की बात थी कि वह वहाँ पहुँच गया परन्तु बुद्धि की कमी थी। चंदन और साधारण लकड़ी में पहिचान की योग्यता नहीं थी। इस कारण उसने उसको लकड़ी को भी साधारण लकड़ी समझा। पाँव तले खजाना है मगर अज्ञानी नहीं जानता हाथ में हीरे जवाहरात हैं उनको कंकड़ पत्थर समझता है। संसार में भाग्य विचित्र रूप से काम करता है। धन होते हुए भी मनुष्य निर्धन रहता है। बलवान होते हुए भी वह निर्बल और अपाहज बनता है।

चंदन का बोझ लिये हुए वह नगर की एक गली से निकला। जिस ओर को गया चारों ओर उसकी सुगँध फैल गई। किसी गली में एक वैश्य रहता था। उसका नाम 'लोभी-

परन्तु उसमें कुछ पूँजी नहीं थी। लकड़हारे को लकड़ी ले जाते हुए देखा, पूछा—'इस बोझ का क्या मूल्य है ?' लकड़हारे ने उत्तर दिया—"मैं निर्धन लड़का हूँ। पेट के लिए यह काम करता हूं। तुम मुझे प्रतिदिन खाने को दिया करो, मैं तुम्हारा घर लकड़ी से भर दिया करूँगा। उसके अतिरिक्त जो उचित मूल्य हो दे देना।"

लोभीलाल को आश्चर्य हुआ। हृदय में बिचार किया कि ईश्वर ने बड़ी कृपा की, घर बैठे गंगा आ गई। इस बोझ का मूल्य कम से कम सहस्त्रों रुपया होगा, क्योंकि चंदन की लकड़ी बहुत मूल्यवान होती है और यह केवल खाना पीना माँगता है। मुँह बना कर कहने लगा—"अरे यार ! इस लकड़ी की किस को आवश्यकता होगी ? न जलाने के काम की है न ईधन के काम की। अच्छा खैर ! तू रोज एक बोझ ले आया कर, मैं तुझे खाने पीने को दिया करूँगा।"

लकड़हारा—"वाह जी ! भले सेठ साहब भले ! दाता आपका कल्याण करे !"

लोभीलाल—"परन्तु भाई शर्त यह है कि यदि तू रोज लायेगा तो मैं तेरा ध्यान रक्खूँगा। यदि रोज न लाया तो तू जाने तेरा काम।"

लकड़हारा—"हाँ जो हाँ ! मैं इसी प्रकार प्रतिदिन बिना नागा लकड़ी लाया करूँगा। इसमें कभी भूल चूक नहीं होगी।"

लोभीलाल—"परन्तु लकड़ी जरा ठोस और भारी भी हो।

लकड़हारा—"ऐसी कड़ी लकड़ी लाऊँ जो कुल्हाड़े से भी न कटे। मुझे भला आपका सहारा तो मिल गया। डूबते को तिनके का सहारा पर्याप्त होता है।"

लोभीलाल—(दिल में हँसा) "यार तू तो बड़ा मनचला है और हँसोड़ यार मालूम है।"

लकड़हारा—"सेठ जी ! मुझ को रोटियों की चिन्ता थी। आपने रोटियों का ठिकाना कर दिया। अब क्या है मैं भी हूं पाँचों सवारों में।"

भूके के जबकि पेट में जाती हैं रोटियाँ।
क्या क्या मजे के नाच नचाती हैं रोटियाँ॥
जिसका है पेट खाली कहाँ है उसे करार।
भूके की भूक प्यास बुझाती हैं रोटियाँ॥
रोटी खिलाओ पानी पिलाओ कि खुश हूं मैं।
रंज व गम व मलाल भुलाती हैं रोटियाँ।
गुस्ताखी माफ रोटी में दुनिया व दीन है।
उकबा की सूझ बूझ सुझाती हैं रोटियाँ॥

लोभीलाल के चेहरे का रंग उड़ गया। लड़के ! तू कवि भी है।

लकड़हारा—'महाराज मैंने झूँठ नहीं कहा।

क्या पहलवानी कोई करेगा जहान में।
खम ठोंक करके दाव बताती हैं रोटियाँ॥

लोभीलाल—"अरे तू कौन है मैंने तो तुझको साधारण मनुष्य समझा था। तू तो बड़ी बड़ी बातें कह रहा है।"

लकड़हारा—"सेठ जी ! आपने यह कहावत नहीं सुनी—'पेट में पड़ा चारा तो नाचने लगा विचारा।'

रोटी में इल्म व अक्ल है होश व हवास है।
भूकों के अक्ल व हाश गँवाती है रोटियां॥

लोभीलाल—'बस बस ! अधिक न बक। मैं जान गया तू कोई बड़ा चतुर आदमी है।'

लकड़हारा—'अभी क्या है ! मेरा पेट तो भरने दीजिये। फिर मैं और मजे मजे की बातें सुनाऊँगा।'

पण्डित के घर में रोटी ही धर्म और कर्म है।

तुमको भी रोटियों ही की है फिक्र सेठ जी।
घर में सेठानी रह के पकाती हैं रोटियां॥

लोभीलाल—"तू तो कोई पढ़ा लिखा आदमी है। लकड़ी क्यों बेचता फिरता है। तेरी बात सुन कर मेरा जी डरता है।"

लकड़हारा—'आप कुछ चिन्ता न करें। यह यूँ ही है। मैं कुछ पढ़ा लिखा था मगर पढ़ाने वाला मर गया। पढ़ा लिखा सब मिट्टी में मिल गया। माँ नहीं पिता नहीं। अनाथ बालक हूँ। रोटी की चिन्ता है। रोटी ही का ध्यान है।"

रोटी मिले तो आदमी अच्छा भला बने।
मकर व फरेब धोखा सिखाती हैं रोटियां॥
रोटी की फिक्र में हुआ इन्सां जला वतन।
घर में महल में उसको बुलाती हैं रोटियां॥

लोभीलाल—"वाह यार वाह! तू तो बड़े मजे का आदमी है। ले रोटी खा, ले पानी पी ले और आनन्द से अपने घर जा। कल मैं फिर इसी समय तेरी बाट देखूँगा। लकड़हारे ने सेठ की रोटी को बड़ी दैन समझा। तृप्त होकर खाना खाया और अपने झोंपड़े की ओर चल दिया। दूसरे दिन नियत समय पर वह फिर एक और अच्छा बोझ चंदन की लकड़ी का सिर पर लाद लाया। सेठ जी का हृदय खिल गया। समझा यह अच्छा मूर्ख फंसा है। बेचारे को उस बेईमान ने रुपया पैसा कुछ नहीं दिया। रोटियों पर ही टाला। लकड़हारा यद्यपि मनचला था, परन्तु अपनी स्थिति से विवश था। इसी को पर्याप्त समझा। इसी प्रकार प्रतिदिन लकड़ियों का बोझ लाना और रोटी खाकर चले जाना उसकी दिनचर्या थी। लोभीलाल तो मालामाल हो गया। एक वर्ष में ही वह लखपति बन गया और अनेक प्रकार की दुकानें खोल लीं। देश देशान्तरों में

चकित थे कि उसके पास कहाँ का खजाना हाथ आ गया। देखते देखते उसकी दशा बदल गई, परन्तु किसी को इसका कुछ अनुमान भी नहीं कि यह सारा धन बेचारे लकड़हारे के कारण मिला है जिसको इस मूँजी ने अपने पंजे में फांस लिया था। भोले भाले आदमी की आँखों पर पट्टी बांधकर निर्दयता से उसको लूटता रहा और उसके भोले पन से लाभ उठाता रहा। इस बेचारे को चूँकि दुनियां देखने का अवसर ही नहीं मिला था, इसी दम दिलासे में यूँ ही अपने जीवन के दिन पूरे करता रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक काम का समय होता है। बेवक्त किसी को क्या मिला है। पत्ता कहीं हुक्म बिन हिला है।

संयोगवश एक दिन लकड़हारा नियमानुसार उसके पास आया कहने लगा—"लो सेठ जी मुझको तो तुम्हारे यहाँ काम करते एक वर्ष से अधिक हो गया। मेरे पास न कपड़े लत्ते हैं न रुपया पैसा है। यदि आज कुछ दिलवाइये तो काम बने।"

लोभीलाल—"मूर्ख ! मैं तेरी निर्धनता पर तरस खा कर तुझको रोटियाँ देता हूं। इस पर तुझ को संतोष नहीं। पैसे मांगने आया है। यदि फिर कभी पैसे का शब्द जबान पर लाया तो फिर मैं तुझ से लकड़ियां लेनी बंद कर दूँगा"

लकड़हारा—"अच्छा सेठ जी न दो परन्तु नाराज न हो कुछ चिन्ता नहीं। लकड़ियाँ तो मैं आपको देता ही रहूंगा मगर आप को किसी प्रकार नाराज करना नहीं चाहता।"

वह बेचारा निराश होकर चला गया। सेठ जी शाम के वक्त दुकान बन्द करके घर पर आये। अब क्या कहना था। नौकर-चाकर, सवारी, घोड़े सब कुछ हो गये थे। सेठानी से खुश हो कहने लगे—'आज उस लकड़हारे की मत मारी गई। मैं तो समझा था कि उसको दुनियां की हवा लग गई है परन्तु

उँगली से घी नहीं निकलता। जब मैंने डराया धमकाया तब वह राह पर आया। अच्छा है मूर्ख यूँ ही फँसा रहे।'

सेठानी—'पति देव ! आपका विचार ठीक नहीं है। कभी न कभी उसकी आंखें खुलेंगी। उस समय आपको लेने के देने पड़ जायेंगे। समय किसी का एक सा नहीं रहता।'

सेठ—'चुप रहो ! रोटी खाई शक्कर से। दुनिया मारी मक्कर से।

इसी प्रकार संसार का हाल है। बड़े पशु छोटों पर इसी प्रकार जीवन निर्वाह करते हैं। सांप को दूसरे के हाथ से पकड़ वाया जाता है। बुद्धिमान अपना हाथ बिल में नहीं डालते। यह सृष्टि का नियम है। काल के जगत में ऐसा ही हुआ करता है। समुद्र की बड़ी मछलियां छोटियों को खाती हैं। बड़े आदमी छोटों का शिकार करते रहते हैं। राजे महाराजे मन्त्री इत्यादि क्या करते हैं ? इनको भी लूट पाट से काम रहता है। यदि मैंने ऐसा किया तो क्या बुरा किया। ईश्वर ने इस अभागे आदमी को मेरे वैभव का साधन बनाया है। मैं क्यों न उससे लाभ उठाऊँ ?

सेठानी—"आप सत्य कहते है परन्तु ईश्वर के यहाँ प्रत्येक काम का फल मिलता है। देखना ! सोच विचार कर काम करना। मैं तो यही राय दूँगी कि जबकि लकड़हारे ने आपको मालामाल कर दिया तो आप भी उसको धन सम्पन्न बना दीजिये कि जिससे भविष्य के लिए किसी प्रकार का भय अथवा खटका न रहे।

सेठ—"चुप रह मूर्ख ! क्या बकती है। मैं तेरी सुनूँ या अपनी सी करूँ ?"

सेठानी—"अच्छा आप जो चाहें करें। आप जानें आपका

सेठ—"हाँ ! एक बात तुमसे नहीं कही कि यह लकड़हारा पढ़ा लिखा मूर्ख है । कवि है । कल आयेगा मैं उससे कहूंगा कि तनिक पैसे को बढ़ाई में कुछ कविता तो सुना दे ।"

सेठानी—"देखिये सँभल कर रहियेगा । मालूम नहीं क्यों और किस प्रकार वह आपके झाँसे में आ गया है । ऐसा न हो कि पीछे से आप पछतायें ।"

सेठ—"चुप चुप ! किसी को कानों कान खबर न होने पाये । यह मूर्ख प्रलय काल तक भी मेरे पंजे से न निकल सकेगा मैं उसके कारण ऐसी ही रंग रलियाँ मनाता रहूंगा और वह वह ऐसे ही निर्धन बना रहेगा ।"

सेठानी चुप । दोनों खाना खाकर सो रहे । सेठ प्रातः नहा धोकर दुकान पर आया । लकड़हारा लकड़ियों का बोझ लाया । सेठ ने आँख बन्द कर उसको कोठार में रखवा दिया और कहने लगा—"हाँ जो ! कल मैं तुमको पैसा नहीं दे सका । लो चार पैसे देता हूं । तुम्हारे पास कपडे लत्ते भी नहीं हैं । यह फटा पुराना कपड़ा भी ले जाओ परन्तु अपना काम चौकसी से करते रहना ।"

लकड़हारा --"वाह सेठ जी वाह ! आप दाता हो धनी हो परमेश्वर आपको सुखी रक्खे ।"

सेठ—"भाई! उस दिन तो तुमने खूब गीत सुनाये थे । ईश्वर ने तुमको अच्छी बुद्धि दी है । यदि जी में आये तो आज भी कुछ पैसे के विषय में दो एक गीत सुनाओ ।"

लकड़हारा—"बहुत अच्छा सेठ जी ! आपने मेरे जी की बात कह दी । मैं रात दिन अपने झोंपड़े में पड़ा रहता हूं और इसी प्रकार के मन बहलाव से काम रखता हूँ । न कहीं आता

पैसों ही से मिलती है ज़माने में बढ़ाई।
एक सिम्त जो पैसा है तो एक सिम्त खुदाई ॥
पैसे से बुराई है तो पैसे से भलाई।
पैसा है गर वस्ल तो पैसे से जुदाई ॥
पैसों ही का दुनिया में हर शख्स है भूका।
पैसे की हबिस रहती है इंसान का इस जा ॥
पैसों पै फिदा जान से और दिल से बशर है।
पैसा जो न हो पास तो इंसान भी खर है ॥
पैसा ही गुनाहों का जबरदस्त सिपर[1] है।
पैसों में अगर नेकी तो पैसों ही में शर[2] है ॥
पैसों की इबादत है तो पैसों की रियाजत।
पैसों की मुहब्बत है तो पैसों की रफाकत ॥
पैसा हो अगर पास तो दीदार[3] है ईसा।
पैसा न हो पास तो लाचार है ईसा ॥
पैसों ही की बरकत से गुनहगार है ईसा।
पैसों का बदौलत ही नेकोकार है ईसा ॥
पैसे अगर पास हों तो रद सारी बला है।
पैसे की इबादत करो पैसा ही खुदा है ॥
पैसा ही फुसूँ सहर[4] है पैसा ही है जादू।
पैसे ही में है जोर वह है कुव्वते बाजू ॥
पैसा ही है दुनिया में इंसाफ का तदारूद।
पैसे ही के मुन्शी हैं तो पैसे ही के बाबू ॥
पैसे की खिलाफत है तो पैसे की रियाजत।
पैसे की बुनब्बत है[5] तो पैसों को करामत ॥
पैसे की है जन पैसे की जर और ज़मी है।

पैसे का अहले मकां और मकीं है ॥
पैसे की अगर दुनियाँ है तो पैसे ही का दीं है।
पैसे ही का आशिक यहाँ हर मर्द व मतीं है ॥ १. शाशक।
पैसा अगर हो पास तो जाहिल भी है आकिल।
पैसा अगर हो पास तो नाकिस भी है काबिल ॥
आला नसीबो पैसों की सूरत में छिपी है।
पैसा जो कमर में हो तो सब बात बना है।
मैं क्यों हूं दुखी पास नहीं मेरे है पैसा।
पैसा अगर हो पास तो हो जाऊँ तुम जैसा ॥
मैं माँगता हूं पैसा तो तुम कहते हो कैसा।
और गुस्से से कहते हो ऐसा और वैसा ॥
पैसों में तरावट है तो पैसों में नमीं है।
मैं क्या कहूं ऐ सेठ जी यही मुझ में कमी है ॥

सेठ सुन कर दंग रह गया। उसके हृदय में खटका उत्पन्न हुआ। चोर की दाढ़ी में तिनका। चिन्ता में पड़ गया। सोचने लगा कि कहीं इस आदमी के हृदय में और तरह का विचार तो नहीं पैदा हो गया। ऐसा न हो कि मेरे चंगुल से निकल जाय। कहने लगा—"वाह लकड़हारे वाह! इस समय यदि कालीदास जीवित होता तो तेरी कविता की दाद देता।"

लकड़हारा—"सेठ जी! मैं कविता क्या जानूँ! झोंपड़ी में बैठा हुआ ऐसी तुक बन्दिया किया करता हूं मगर आपको ख्याल रहे बात पते की सुना देता हूं।"

अब तो सेठ जी को और भी सन्देह हुआ! हो न हो कुछ समझता है। ऐसा न हो कभी दाव खेल जाय। बात बदल कर कहने लगा—"लकड़हारे तू तो राजाओं की सगत में रहने के योग्य है।"

हो सकतो है। मैं तो निर्धन हूं। किसी तरह आपके सहारे खाता पीता हूं। देखिये कब तक मेरी दशा ऐसी है। मैं नहीं जानता भाग्य ने मुझे इसी निर्धनता के लिए पैदा किया है या मैं भी कभी अच्छे दिन देखूँगा।"

सेठ—"क्या तुझको रुपया पैसा की इच्छा है। मैंने तो समझा था कि तुझको अपनी दशा पर सन्तोष है।"

लकड़हारा—"आपने कैसे समझ लिया कि मैं लालची हूँ। नहीं नहीं मुझमें लोभ लालच नहीं है। जो कुछ मिल जाता है उसी पर सन्तोष कर लेता हूँ। उसका कारण यह है कि मैं एक साधू का लड़का हूं। जो कुछ उसने मुझे बचपन में शिक्षा दी थी उसी पर चलता हूं मगर में यह जानता हूँ कि मैं किसी और हालत के लिए बनाया गया हूँ। वह हालत कब आयेगी मुझे ज्ञात नहीं।"

अब तो सेठ जी और भी सुधिबुधि भूल गये। पूछने लगे—"तू कहाँ का निवासी है ? क्या किसी और कारण से ऐसी गति बना रक्खी है ?"

लकड़हारा खिल खिला कर हँसा—"वाह सेठ जी वाह ! तुमको बहुत दूर की सूझी। आपको मेरी बातों से विश्वास नहीं हुआ। मैंने अभी अभी आप से कहा है कि मैं एक साधू का लड़का हूं। इससे यह न समझियेगा कि मेरा बाप साधू था। उसने मेरा पालन पोषण किया था। मुझे ज्ञात नहीं कि मेरा बाप कौन था ? मेरी माँ मर गई। वह भी मेरी तरह साधू को पिताजी कहा करती थी। यदि वह जीवित होती तो मैं उससे पूछता। इसलिए इस रहस्य का हल होना कठिन है। मैं महीनों से मन में सोचा करता हूँ कि आखिर मैं कौन हूँ, क्यों पैदा

तो अब उसकी हैरानी और भी बढ़ गयी। अधिक बात चीत करना उचित नहीं समझा। लकड़हारे को प्रथा अनुसार खाना खिलाया और विदा कर दिया। वह प्रसन्न होकर अपनी झोंपड़ी को ओर चला गया।

छटवां प्रकरण

सत्संग

कथा कीर्त्तन कलि बसे, भवसागर की नाव।
कहें कबीर भव तरन को, नाहीं और उपाव॥
कथा कीर्त्तन रात दिन, जाके उद्यम येह।
कहें कबीर ता दास से, निश्चय कीजे नेह॥

लकड़हारा पैसे लेकर घर आया। कुछ समय उन हिन्दी पुस्तकों के अध्ययन में व्यतीत किया जो 'उसको उस साधू से मिली थीं और जिनको प्राणों से भी प्यारा रखता था। पढ़ना लिखना उसका नित्य नियम रहता था। संस्कार प्रत्यक्ष जगत में विचित्र प्रकार से काम करते हैं। साधू के झोंपड़े में पालन पोषण होने के कारण इसमें भक्ति के संस्कार थे। वास्तव में वह मालिक का प्यारा था। यही कारण है कि अब तक उसके ऊपर माया का आक्रमण नहीं हुआ था। आज जो मिल गया खा लिया। कल की चिन्ता नहीं। इस प्रकार उसने पाँच वर्ष बिताये।

पास में एक कुम्हार का घर था। बड़ा दीन हीन और अज्ञानी मगर इसमें यह गुण था कि सायंकाल जब अपने काम से फुर्सत पाता अपने साथियों को लेकर भजन ध्यान में लग

का यह किस्सा है उस समय नगर में एक साधु आया हुआ था। रहता तो वह एक मन्दिर में था मगर कुम्हार की भक्ति देखकर संध्या होते ही वह घर आ जाया करता था। सब लोग मिलकर भजन गाया करते थे। सांसारिक लोग उस सुख को नहीं जानते जो इस प्रकार के कर्म से प्राप्त होता है। भक्ति रस भी विचित्र प्रकार का रस होता है जो आदमी को और रसों की ओर से बेपरवाह बना देता है। आत्मा नित्य प्रति साधन अभ्यास से ऊँची चढ़ने वाली बनती जाती है। दुनिया का रस फीका प्रतीत होने लगता है। मन की शक्तियाँ एकाग्र होकर एक ओर अपनी चेष्टा बना लेती है। यह जीवन है और असली जीवन है।

संध्या का समय हुआ। सूर्यास्त हो गया। लकड़हारे ने अपने हृदय में कहा—"चलो अब कुम्हार के घर सत्संग के लिए चलें।" जब वह वहाँ पहुँचा सब उसको देखकर प्रसन्न हो गये। यद्यपि वह कुम्हार के यहाँ नित्य जाया करता था मगर कोई उसकी दशा से परिचित नहीं था न किसी ने उससे पूछा कि तू कौन है और न उसने बताया कि मैं कौन हूं। बस इतना ही जानना काफी था कि वह भक्त है और भगवान का प्यारा है। लोभीलाल के यहाँ तो जाकर वह कुछ बातचीत भी करता था मगर सत्संग में वह चुपचाप बैठा रहता था। हाँ, भजन में प्रायः सम्मिलित हो जाया करता था। गाने का उसको कुदरती शौक था। जिस समय वह पहुँचा लोगों ने कहा—"भगतजी! आइये। अब कथा आरम्भ होनी चाहिए और सब एक सुर होकर यह भजन गाने लगे:—

सिरजन हारा पालन हारा, राखन हारा श्रुति सारा ॥१॥
जानन हारा, धारण हारा, मारन हारा, रखवारा ॥२॥
महिमा विमल अनूपम तेरी, सब में रमा सबसे न्यारा ॥३॥

ऋषि मुनि कोई भेद न पावे, वेद कहे अपरम्पारा ॥४॥
कारण कारज कर्म विधाता, हर्त्ता धर्त्ता करतारा ॥५॥
गाता माता अपनी दशा में, परम तत्व का भंडारा ॥६॥
तेरे बिना नहिं कोई रक्षक, सबका तू है आधारा ॥७॥
प्रीतम प्यारा भक्त सहारा, जन को आँखों का तारा ॥८॥
भूल भटक से भरम मोह से, प्रभु दे सबको छुटकारा ॥९॥
जग की आस त्याग करुणामय, पहुंचादे भव जल पारा ॥१०॥
घट घट बासी सकल प्रकाशी, अविनाशी हित सुतदारा ॥११॥
अन्तरयामी सबका स्वामी, धन यश सम्पति परिवारा ॥१२॥
भक्ति दान दे शक्ति दान दे, बुद्धि दान दे दातारा ॥१३॥
चरण कंवल में शीश नवाकर, रहूँ बसूँ चरणन लारा ॥१४॥

वन्दना करने के पश्चात सब एक स्वर होकर लकड़हारे से बोले—"भक्तराज ! यह दुतारा उठा लीजिये और आप अकेले कोई भजन गाइये।"

लकड़हारा—बहुत अच्छा ! सुनिये, उसने दुतारा उठा लिया और टन टन करते हुए तारों को मिलाया और मस्त होकर गाना आरम्भ किया।

भजन

भजता क्यों नाहीं सतनाम।
जाकी पूँजी साँस है, नित आवे नित जाय।
ताको ऐसा चाहिए, रहे नाम लौ जाय ॥ भजता० ॥
नाम रसायन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल।
कबीर पीना कठिन है, माँगे शीश कलाल ॥ भजता० ॥
राता माता नाम का, पीया प्रेम अघाय।
मतवाला दीदार का, माँगे मुक्ति बलाय ॥ भजता० ॥

फिर पाछे पछताओगे, जब तन जैहें छूट ।। भजता० ।।
नाम जपत कन्या भली, साकत भला न पूत ।
छेरी के गल गलथना, जामें दूध न मूत ।। भजता० ।।
नाम जो रत्ती एक है पाप जो रत्ती हजार ।
एक रत्ती घट संचरै करे जार सब छार ।। भजता० ।।
सुरत समानी नाम में, जग से रहा उदास ।
कहें कबीर गुरु चरण में, दृढ़ राखे विश्वास । भजता० ।।
तीरथ गये तो एक फल, संत मिले फल चार ।
सतगुरु मिले अनेक फल, कहे कबीर विचार ।। भजता० ।।
जाकी पूँजी नाम है, ताके हैं सब रिद्ध ।
कर जोड़े ठाड़ी सभी, आठ सिद्ध नौ निद्ध ।। भजता० ।।

सन्नाटा छा गया । सब मग्न हो गये क्योंकि लकड़हारा सचमुच प्रेमी था । जो बात निकलती थी हृदय से निकलती थी और वह दूसरों के हृदय पर चोट करती थी । रोना गाना कौन नहीं जानता । सब ही गुनगुनाया करते हैं किन्तु प्रेमी का गाना कुछ और वस्तु है ।

सब ने कहा—"वाह भगत जी वाह ! इस समय तो आपने अमृत वर्षा की है ।

अच्छा महाराज ! अब तो साधु जी कुछ सुनायेंगे । इनके गाने में कुछ रस आता है । मैंने यों ही ऊँट पटाँग गा दिया । सुरताल की भी सुधि नहीं है । यहाँ तो वही हाल है—

सुर की खबर न ताल की है ।
ढोलक भी अजोब चाल की है ।।

साधू—"भगत जी यह तो आपकी दीनता है । वास्तव में आपका गाना ला जवाब है । जो कुछ आपकी जबान से निकलता है वह हृदय पर चोट करता है । लीजिये मैं बहिन कमालो का एक भजन सुनाता हूं—

हँसा निकल गया मैना लड़ी सी ॥
पाँच सहेली मैली कुचैली, मैं पाँचों से न्यारी खड़ी सी ॥हंसा॥
नौ दरबाजे बन्द कर लीने, दसवीं खुली मेरो खिड़की पड़ी सी ॥
ना मैं बोली ना मैं चाली, ओढ़े दुपट्टा किनारे खड़ी सी । हंसा॥
कहत 'कमाली' कबीर की बेटी, ब्याही से मैं क्वारी भली सी ॥

वाह महाराज वाह ! क्या कहने हैं । आप सचमुच सत्संग के राजा हो और भक्त जी प्रधान हैं ।

साधू ने कुम्हार को ओर देखा—"अब आपको बारी है । आप भी कुछ कहिये ।"

कुम्हार—"महाराज ! मैं क्या कहूं ? सूर्य को दीपक दिखाना अच्छा नहीं लगता । जहाँ आप जैसे रत्न विराजमान हैं वहाँ कुम्हार से निःसार आदमी की क्या असलियत है ।"

साधू—"यह सत्संग है । यहाँ छुटाई बड़ाई का ख्याल नहीं । हम लोग सब मालिक के प्यारे हैं । सब उसी के बाल बच्चे हैं । जो मन में आवे प्रेम से सुनाइये ।"

कुम्हार—"बहुत अच्छा जो आपको आज्ञा । लीजिये सुनाता हूं ।

भजन

देखो जग बौराना, साधो देखो ! जग बौराना ।
साँच कहूँ तो मारन धावे, झूठे जग पतियाना ॥ साधो० ॥
नियमी देखा धर्मी देखा, प्रात करे अस्नाना ।
आतम मार पखानहिं पूजें, तन मन कछू न ज्ञाना ॥साधो०॥
बहुतक देखा पीर औलिया, पढ़े किताब कुराना ।
करें मुरीद कबर बतलावें, तन में अति अज्ञाना ॥साधो०॥
आसन मार देह धरि बैठें, मन में बहुत गुमाना ।
पाथर पित्तर पूजन लागे, तीरथ ब्रत भुलाना ॥साधो०॥

माला पहिने टोपी पहने, तिलक छाप अनुमाना ।
साखी शब्द ही गावत भूले, आतम खबर न जाना ॥साधो०॥
हिन्दू कहत है राम पियारा, तुर्क कहें रहमाना ।
आपस में दोऊ लड़े मरत हैं, काहू मरम न जाना ॥साधो०॥
घर घर मन्तर देत फिरत हैं, महिमा के अभिमाना ।
सतगुरु चरण प्रीति नहीं गाढ़ी, अंतकाल पछताना ॥साधो०॥
ज्ञानी ध्यानी जोगी भोगी, पण्डित शेख दिवाना ।
कहें कबीर सुनो भाई संतो, यह सब भरम भुलाना ॥साधो०॥

साधू—"बहुत अच्छा कहा ! कबीर की बाणी अमृत की घूँट है । जो बात कहते हैं सच्चो सच्ची कहते हैं । दुनिया माने या न माने यह अलग बात है । अच्छा ! अब समय बहुत हो गया । अब सब मिलकर आर्ती कर लो । फिर सत्संग समाप्त हो । सब आर्ती करने लगे—

बार बार कर जोड़कर, सविनय करूँ पुकार ।
साधु संग मोहि देउ नित परम गुरु दातार ॥
कृपा सिन्धु समरथ पुरुष, आदि अनादि अपार ।
राधास्वामी परम पितु, मैं तुम सदा अपार ॥
दया करो मेरे साइयाँ, देव प्रेम की दात ।
दुःख सुक्ख व्यापे नहीं, छूटे सब उत्पात ॥

सत्संग समाप्त हुआ । सब लोग एक दूसरे को नमस्कार करके अपने अपने घर चले गये ।

अब यहाँ से दूसरी कहानी शुरू होती है जो इस उपन्यास की असली कहानी है ।

यहाँ का किस्सा यहाँ छोड़िये । समनदे[1] कलम की अना[2] मोड़िये

कुम्हार के घर में दरबाजा नहीं था । बड़ा निर्धन था । जो

---

(१) घोड़ा । (२) लगाम ।

कुछ मेहनत मजदूरी से मिलता उसी पर गुजर बसर करता। यदि कुछ बच रहता तो वह सत्संग में खर्च होता। उसको जो नई उपज सूझी तो चोरों के डर से एक पांव में चाक को बाँध लिया और दूसरे पांव में गधे की रस्सी लपेट ली ताकि यदि कोई चोर आवे तो उसको सहज में ज्ञात हो जाय। गंवार तो था ही, इससे अच्छा और कोई उपाय उसकी समझ में नहीं आया। इस ढँग से वह अपनी पूँजी की रक्षा करके बेखटके सो रहा। दिन भर के परिश्रम का थका हुआ था, सोया तो तन बदन की सुधि न रही। उस समय से कुम्हार की उपज के कारण यह कहावत मशहूर हो गयी कि—"क्या तुम घोड़ा बाँधकर सोते थे ?" गधे के स्थान पर लोग कहावत में घोड़े का प्रयोग करते हैं।

अब और सुनिये। नगर के राजा की यह आदत थी कि प्रायः रात के समय भेष बदल कर शहर के देखने के लिए अकेला पैदल निकलता था। उस रात को उसे नींद नहीं आई और इसी दशा में महल से बाहर निकला। इधर उधर घूमते फिरते उसी जगह पहुँचा जहां कुम्हार नींद में चूर होकर सो रहा था। चांदनी रात्रि थी। राजा की दृष्टि उस पर पड़ी। पहिले तो उसे देखकर मन में बड़ा हँसा। फिर सोचने लगा कि देखो यह कंगाल आदमी है मगर सुख की नींद सो रहा है। मैं राजा हूँ मगर मुझको यह आराम प्राप्त नहीं। संसार में जो जितना ही बड़ा है वह उतना ही चिन्तित है। जो जितना निर्धन है वह उतना ही बेफिक्र है। राज काज का बोझ वास्तव में बड़ा कष्टकारक होता है। प्रजा को तो अपनी ही चिन्ता रहती है मगर राजा को समस्त प्रजा की चिन्ता रहती है। अपना बोझ तो हर एक व्यक्ति उठा सकता है मगर सबका अकेले कैसे उठाये। संसार में दुख ही दुख है। लोग रात को

बेफिक्री की नींद सोते हैं और मुझको नींद नहीं आती। वाह कुम्हार वाह ! तेरी दशा मुझको नये नये पाठ पढ़ाती है।

है जहाँ में जिन्दगानी चन्द रोज।
पीरी और अहदे जवानी चन्द रोज॥
रंज और दुख जिस तरह है आरजी।
है खुशी और शादमानी चन्द रोज॥
किसका शिकवा किसका कीजे यहाँ गिला।
है जहाँ गुजरान फानी चन्द रोज॥
"अख़्तरे" नादां न इतरा कर चल।
गो मिली थी कामरानी चन्द रोज॥

इस तरह सोचता हुआ और राग गाता हुआ दबे पाँव दूसरी ओर को चला। मगर कोई ऐसा दृश्य सामने नहीं आया जो इस कुम्हार के बेफिक्री के ख्याल को भुला देता। मन में कहा—"चलो महल की ओर चलें। थोड़ी सी रात है सो रहें। प्रातः फिर राज काज करना पड़ेगा।" वह महल के निकट आया। सामने बाग था। जिस समय बाग के बँगले पर दृष्टि पड़ी उसने सोचा—"यह सब महल और मकान मनोहर होने पर भी मुझको उस प्रकार की नींद नहीं सोने देते जो कुम्हार को अपने झोंपड़े में प्राप्त है। आओ उस बँगले की दीवार पर कुछ लिख दें ताकि कभी कभी इस विचित्र घटना का स्मरण होता रहे। उसने शेर लिखा—

कोशिश करते हैं पर हमको नहीं आती है नींद।
सौ तरह के नाज़ व अशवे[1] रोज दिखलाती है नींद॥ १.हाव-भाव
चाक से गदहे को बाँधा और गधे को पाँव से।
सो रहा उसको नहीं जिनहार तरसाती है नींद॥
लूटता है नींद का बेशक मजा गाफिल कुम्हार।

यह लिखकर वह महल में गया। पलङ्ग पर लेट रहा। ईश्वर जाने उसको नीद आई या नहीं। वह जानता होगा या उसका मन जानता होगा। हमको ज्ञात नहीं।

सातवाँ प्रकरण

बच्चों के लाड़ प्यार का परिणाम

लोभीलाल लकड़हारे को विदा करके तरह तरह के ख्याली पुलाव पकाने लगा। उसको उसकी ओर से कुछ खटका सा पैदा हो गया। सोचा यह तो फँसने लाइक चिड़िया नहीं थी। मेरे चंगुल में कैसे आ गई? इसमें कुछ न कुछ भेद है। मगर नहीं मुझको इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। मेरे भाग्य ने उसको मेरे धनी बनाने का साधन बनाया है। वह भाग्य फिर भी अपना काम करेगा और यह मूर्ख इसी प्रकार मेरे चंगुल में फँसा रहेगा।"

जाने भी दो। क्यों व्यर्थ उलझन में पड़ूँ। इससे होता क्या है? नगर वासियों को आश्चर्य है कि यह धन कहाँ से मेरे हाथ लगा। जब कोई पूछता है तो कह देता हूँ कि देश देशान्तर में मेरी कोठियाँ हैं।

वह इस चक्कर में था कि उसका लाड़ला लड़का दौड़ता और हाँफता हुआ आया।

लोभीलाल—"अरे तू इतना क्यों हांफ रहा है?"

लड़का--"चुप बाबा चुप। पण्डित मुझको पकड़ने को आ रहा है। यदि पकड़ लेगा तो मारेगा।"

लोभीलाल—"मारेगा क्यों? क्या तूने उसका कुछ

लड़का—"बिगाड़ा तो कुछ नहीं। मैं पाठशाला नही जाता था। एक लड़का बुलाने आया। मैंने उसे ढेला मार दिया। उसने पण्डित से शिकायत की। पण्डित आ ही रहा है। मुझे बचा लो नहीं तो मेरी पिटाई होगी।"

लोभीलाल—"अच्छा अच्छा! तू कोठरी में छिप जा। पण्डित से मैं निबट लूँगा।"

वह कोठरी में जा छुपा। इतने में पण्डित भी हाथ में छड़ी लिये आ पहुँचा।

पण्डित—'सेठ जी राम राम।'

लोभीलाल—"राम राम पण्डित जी राम राम। कहो कैसे पधारे?"

पण्डित—"क्या कहूं आपके लड़के ने तो नाक में दम कर रक्खा है न आप पढ़ता हैं न औरों को पढ़ने देता है। जब देखो तब पाठशाला से गायब रहता है। आज एक लड़के को अकारण मार दिया। उसको चोट आ गई। खून बह रहा है। मैं स्वयं उसको पकडने को आया हूँ।"

लोभीलाल—"पण्डित जी! लड़के तो यों ही लड़ते झगड़ते रहते हैं। कभी उनमें बिगाड़ होता है और कभी प्यार। आप जैसे भद्र पुरुषों को इन झगड़ों में पड़ने से क्या लाभ! जाने भी दीजिये।"

पण्डित—"यदि में इन लड़कों का सुधार न करूँ तो कौन करेगा। जब तक डाट डपट से काम नहीं लिया जाता तब तक वह सीधे नहीं होते।"

लोभीलाल—"तो क्या आप मेरे लड़के को मारोगे?"

पंडित—"और नहीं तो क्या करूँगा। लड़कों की अदालत मैं हूँ। क्या उनको पुलिस को दूँगा?

लोभीलाल—"अरे बाप रे बाप! मेरा लड़का और मार

खाये । पण्डित जी ! आप क्या कह रहे हैं । मैंने उसे बड़े लाड़ प्यार से पाला है । मुझ से यह कैसे देखा जायेगा !"

पंडित—"यदि बच्चे को पढ़ाना लिखाना है तो फिर इन बातों का विचार व्यर्थ है ।"

लोभीलाल—'यदि यही बात है तो लड़के को आपको देने में मेरा जी डरता है । "

पण्डित—'यदि वह पढ़ेगा नहीं तो क्या कीजियेगा ।"

लोभीलाल—'न पढ़ेगा तो इसका क्या विगड़ेगा । पढ़े लिखे आदमी दस दस रुपये को मारे मारे फिरते हैं ।'

पण्डित—बात तो सही है । यह समय ऐसा हो है । मगर फिर भी विद्या व कला अपना मूल्य रखते हैं ।'

लोभीलाल—'मैं तुम्हारा भी तो मूल्य देखता हूं । तुमको क्या वेतन मिलता है । न पेट को रोटो है न तन को कपड़ा । क्या तुम्हारी तरह मैं भी अपने लड़के को बेइज्जत और बे-हैसियत बनाऊँगा । वह अपनी कोठी पर बैठेगा । उसके मुनीम होंगे । सब काम करेंगे । लड़के ने न पढ़ा लिखा तो क्या होगा ।'

पण्डित अपमानित होकर चला गया । उसके जाते ही लड़का कोठरी से इठलाता हुआ और अकड़ता हुआ निकला । साथ ही गाता भी जाता था ।

ठुमक चलत रामचन्द्र बाजत पैंजनियाँ ।

लड़का—वाह बाबा वाह ! पन्डित को खूब कोरो कोरी सुनाई अच्छा किया । गँवार मुझको नित्य मारा करता था ।"

लोभीलाल—"अरे ! नित्य मारता था तो तूने मुझसे क्यों नहीं कहा । मैं उसकी खाल खिचवा लेता ।"

लड़का—"हाँ बाबा हाँ ! वाह बाबा वाह !"

लोभीलाल—"यदि एक पण्डित चला गया तो सौ पण्डित

लड़का—"ना बाबा ना, एक पंडित से तो राम राम करके जान छुटी है, सौ से कैसे छुटकारा मिलेगा।"

लोभीलाल—"गँवार ! तू नहीं समझता। यह तो कहने की बात है।"

लड़का—"ना बाबा ना ! बात ही सब कुछ है। यदि तुम सौ पण्डित बुलाते हो तो मुझे उसी एक के यहां भेज दो। एक अच्छा कि सौ ?"

लोभीलाल—"अरे ! यह अभिप्राय नहीं है। मैं तो कहता हूं कि वैसे सौ मिल सकते हैं।"

लड़का—"क्यों बाबा ! क्या सौ पंडितों को बुला कर तुम पाठशाला खोलोगे ? वह सब लड़कों को मारेंगे और तुमको पाप लगेगा। लड़के तुमको हत्यारा कहेंगे और मैं भी तुमको हत्यारा कहूंगा।"

लोभीलाल—"मेरे भोले बेटे ! मैं पाठशाला न खोलूँगा। आ तुझे गोद में ले लूँ।"

लड़का बाप के गले से चिपट गया। "मुझे न पढ़ाओ मैं न पढ़ूँगा।"

लोभीलाल—"कुछ न कुछ हिसाब किताब तो जानना ही होगा नहीं तो दुकान का काम कैसे कर सकोगे।"

लड़का—'भला दुकान के काम करने से क्या होगा ?'

लोभीलाल—'धन-दौलत मिलेगी।'

लड़का—'फिर क्या होगा ?'

लोभीलाल—'तेरा विवाह करूँगा। नाच रंग होंगे। नन्हीं सी बहू घर में आयेगी।'

लड़का—'हाँ बाबा हाँ ! विवाह में क्या होगा ?'

लोभीलाल—'खूब धूमधाम होगी। तू घोड़े पर सवार होगा। तेरी बहू पालकी में बैठेगी। बड़ी धूम धाम से बरात

चढ़ेगी। आतिश बाजी छूटेगी, रडिया नाचेंगी। दिल खोल कर रुपया लगाऊँगा। सबकी मेहमानदारी होगी। तेरे सास सुसर देखेंगे कि लोभोलाल बड़ा आदमी है। अच्छा! अब घर चला जा। कुछ काम भी करने दे।'

लड़का—'नहीं बाबा तुम बनो घोड़ा और मैं तुम पर चढ़ूँ। समझ लो विवाह करने चला हूं।'

लोभीलाल खिसियाना हो गया। लड़का था हठीला। रोने लगा। विवश उसने अपनी पीठ झुका दी। कहा —अच्छा घोड़े पर सवार हो जा। फिर क्या था। लड़का कूद कर चढ़ बैठा और कहने लगा—'टिक टिक घोड़े टिक टिक! मेरा घोड़ा खाता है बिल्ली और जाता है दिल्ली। मेरा घोड़ा खाता है खीर और जाता है कश्मीर॥ मेरा घोड़ा खाता है घास और हो जाय उसका सत्यानाश। यह कह कर मुँह पर दो थप्पड़ जमा दिये। चल चल, उछल कूदकर चल।'

लोभीलाल—'अरे! तू मुझको मारता है।'

लड़का—'और क्या करूँ। घोड़े को सभी मारते हैं। चाबुक नहीं हैं वर्ना इतने जोर से लगाता कि तुम सरपट दौड़ने लगते।'

लोभीलाल—'अच्छा अब उतर, बहुत लाड़ प्यार हो चुका। घर जा। काम काज करने दे।'

लड़का उतर पड़ा। कहने लगा कि एक बात तो हो गयी। एक बात रह गई। बाबा मैं बनूँ दूल्हा और तुम बनो दुलहिन लाओ दुकान से धोती कपड़े। खूब बन ठन कर चलो। अम्मा से कहूं कि नई दुलहिन लाया हूं।

लोभोलाल को क्रोध आया। लड़के को डाँट बताई। तू इतना धूर्त क्यों होता जाता है। पंडित सच कहता था कि

लड़के लाड़ प्यार से बिगड़ते हैं। आज ही मैंने तेरी पक्ष ली। और आज ही तूने मेरी दुर्गति बना दी।

लोभीलाल का आँख दिखाना था कि लड़का ढार मार कर रोने लगा और उसी शकल से सेठानी के पास चला गया। सेठानी विकल होकर उसके पास आई। फिर तो स्त्री पुरुष दोनों में वह बातें हुई कि जिनका वर्णन कठिन है। समझने वाले स्वयं ही समझ लें कि बेहूदा लाड़ प्यार का यह परिणाम होता है।

आठवाँ प्रकरण

राज मन्दिर, बाग बगीचा, राजारानी, राजकुमार

गुरु पशु नर पशु, त्रिया पशु, वेद पशू संसार।
मानुष ताही जानिये, जाहि विवेक विचार॥

प्रातःकाल का सुहावना समय है। महल के पास बाग में राजकुमारी बीना अपनी सखी गुलाब को लिए हुए आई। चारों ओर फूल खिले हुये थे। उनके चहुँ ओर भौंरे मंडला रहे थे। गुलाब ने कहा—"बहिन बीना! ससार में सुन्दरता भी क्या वस्तु होती है। खिले हुए फूलों के चहुँ ओर भौंरा किस प्रकार मस्त होकर मंडला रहा है।"

भौंरा लोभी फूल का, कली कली रस ले।
काँटा लागा प्रेम का, तड़प तड़प जिया दे॥

बीना—"बहिन! तू सच कहती है मगर बात तो तब है जब बाहरी लावण्य के साथ आँतरिक लावण्य भी हो। रूप रंग अच्छा हुआ तो क्या हुआ, गुण भी अच्छे होने चाहिए। तू समझती है भौंरा फूल को सुन्दरता पर मुग्ध है। नहीं, नहीं

वह फूल के गुण अर्थात उसकी सुगन्ध का प्रेमी है। वह रंग पर नहीं मरता, सुगन्ध पर मरता है। जिस फूल में सुगन्ध नहीं होती, उस पर भौंरा लट्टू नहीं होता। देखो चम्पा का फूल कितना सुन्दर और कितने अच्छे रंग वाला है मगर भौंरा उसके पास होकर भी नहीं फटकता।"

गुलाब—"मैं कैसे कहूँ कि सुन्दरता सारहीन वस्तु है।"

बीना—"मैंने कब कहा कि वह अच्छी वस्तु नहीं है। मेरे कहने का अभिप्राय केवल यह था कि मनुष्य में निजी शुभ गुण होने आवश्यक हैं।"

गुलाब—"बहिन ! तूने अभी अभी यह कहा है कि भौंरा सुगन्ध का प्रेमी है मगर देख चम्पा में कितनी सुगन्ध है। भौंरा भूलकर भी उसके पास नहीं जाता। क्या तूने नहीं सुना है ?

चम्पा तुझ में तीन गुण, रूप रंग और वास।
अवगुण तुझ में एक है, भौंरा न बैठे पास॥

बीना—"बात कहने का फेर है। बावली ! तू अक्षर अक्षर को सच जान लेती है।"

सृष्टि में एक बात और है। जो जैसा चाहता है वह वैसी ही वस्तु से मिलता है। जब तक वह वस्तुयें एक हैसियत और एक दशा की न हों तब तक उनका मिलना कठिन है। जो स्थूल है वह स्थूल से मिलता है। जो सूक्ष्म है वह सूक्ष्म से मिलता है।

"माटी से माटी मिले, मिले कीच से कीच।
उत्तम से उत्तम मिले, मिले नीच से नीच॥

गुलाब हँसी। बलिहारी तेरी बुद्धि पर ! राजकुमारी ! तू बड़ी भोली भाली है। कहाँ कोयले जैसा रंग का काला कलूटा

हैं ? चम्पा और गुलाब के फूल में कितना अन्तर होता है लेकिन चम्पा के पास भौंरा के न जाने का कोई और कारण होगा।

बीना—'हाँ री हाँ सखा ! मैं भोला भाली हूं मगर तू भी तो बाहरी चमक दमक पर मरती है। अतर का हाल नहीं जानती। भौंरे को तो काला कलूटा कहती है मगर हृदय तो उसका सुन्दर है। तब तो वह गुलाब पर आसक्त है। अच्छा हो ! तेरा विवाह किसी काले कलूटे के साथ हो क्योंकि तेरा नाम गुलाब है। उसका नाम भौंरा हो। तब मजे की बात हो।"

गुलाब—"तू भी तो नाम पर मर गई। तेरा नाम बीना है। किसी सपेरे के साथ तेरा विवाह हो तो अच्छी पटे। क्यों पते की कही ना।"

बीना है तू नाम की, तुझमें राग न रङ्ग।
बीना बीना तब बजे, जब रहे सपेरा सङ्ग॥

बीना—"देख इतनी न अकड़ ! मैंने तेरे चिढ़ाने को कुछ नहीं कहा है। तूने मेरी बात नहीं समझी। प्रत्यक्ष में दो स्त्री पुरुष चाहे कैसे हों क्यों न हों लेकिन यदि उनके हृदय एक से हैं तब वह एक दूसरे के चाहने वाले मिलेंगे। यदि यह नहीं है तो फिर उनमें मेल मिलाप का होना असम्भव है। इसी प्रकार सृष्टि की वस्तुओं में भी अनुकूलता होती है जिनको वाह्य दृष्टि रखने वाला नहीं समझ सकता। चम्पा की सुगन्ध बहुत कड़ी होती है। गुलाब की भीनी भीनी। जो आनन्द भीनी सुगन्ध में है वह कड़ी सुगन्ध में नहीं है। भौंरा हृदय का कोमल होता है इसलिए गुलाब और गुलाब की सुगन्ध पर जान देता है।"

गुलाब—"तुझको तो हँसी दिल्लगी का अवसर मिला है जो चाहे कहले। मैं भी किसी दिन इसका बदला लूँगी। आज तेरा पिता रायसिंह रानी से कह रहा था कि बीना सयानी हो

गई उसका विवाह कर देना चाहिए। रानो कहती थी कि साथ ही साथ छोटी लड़की बेलो का भी विवाह हो जाना चाहिए ।"

बीना—"हाँ ! और क्या बातें हुईं ?"

गुलाब—"रानी ने कहा कि बीना को जहाँ चाहो विवाह दो मैं कुछ न कहूंगी, लेकिन बेलो की शादी किसी बड़े राजा के घर होनी चाहिए ।"

बीना—"देख सखी ! यदि आज मेरी माँ जीवित होती तो वह इस बे परवाही के साथ बात चीत न करती। माँ की ममता बड़ी होती है। मैं राना की सौतेली बेटी हूं। वह मुझको सदा कुदृष्टि से देखती है और अपनी बेटी बेली को लाड़ प्यार करती है।

गुलाब—"दुनियाँ में सौतेली मायें ऐसी ही हुआ करती हैं। यह कोई नई बात नहीं हैं लेकिन बहिन बीना बुरा न मानना। तू मुझको भौंरे के साथ व्याहती है। यदि रानी चिढ़ कर तेरा विवाह किसी सपेरे के साथ कर दे तब मैं तुझ से पूछूँगी कि बहिन अब बता कि क्या हाल है ? मेरी बात सच्ची हुई अथवा नहीं।"

बीना—"चल हट ! तुझे हँसी की सूझती है। मुझे तो विवाह की लालसा भी नहीं है। लेकिन चाहे राजा रानी मुझे बुरे से बुरे के साथ व्याह दें, यदि मैं बीना हूं तो मैं उसको बड़ा आदमी बना कर छोड़ूँगी। बहिन गुलाब ! यदि स्त्री भली है तो निकम्मा पुरुष भी काम का बन जाता है। यदि स्त्री बुरी हो तो वह राजा को भी भिकारी बना देती है।"

गुलाब—"सुनती तो मैं भी यही आई हूं मगर ज्ञात नहीं कि यह बात सच्ची है या झूठी है। दुनियाँ में कितनी ही बातें

हैं।"

बीना—"तेरा कहना ठीक है मगर उच्च बुद्धि वाली स्त्रियाँ सब कुछ कर सकती हैं। सब कुछ कर दिखाती हैं।"

गुलाब—"अच्छा बहिन ! मैं भी देखूँगी जब तू सपेरे को पाकर उसको राजा बनायेगी। अच्छा अब जाने दो। छेड़ छाड़ की बातें ठीक नहीं। बाग में मन बहलाने आई हूँ न कि जली कटी सुनने सुनाने आई हूं। देखो कैसे फूल खिल रहे हैं। आम के वृक्ष पर बैठी हुई कोयल किलोल कर रही है। इसमें संदेह नहीं कि यह बड़ी सुखी होगी।"

बीना—"बहिन ! सुख दुख तो मन का भाव है। सच्ची बात तो यह है कि संसार में सच्चा सुख केवल संतोष है। इससे बढ़ कर कोई सुख नहीं। दुनियाँ में आदमी चाहे कराड़ पति हो या निर्धन हो, यदि उनमें संतोष नहीं है तो दोनों ही समान हैं। रूखा सूखा खाकर गरीब संतोषी सुखी रहता है मगर चिकनी चुपड़ी खाने वाला करोड़ पति सदा दुखी रहता है। सुख न खाने में है न पीने में है। जब तक ग्रास मुँह में है तब तक स्वाद मालूम देता है। गले से नीचे उतरा, पेट में गया फिर उसके स्वाद का पता कहाँ है। इस जगत में जहाँ देखो दुख ही दुख है।

तन धर सुखिया कोई न देखा, जो देखा सो दुखिया हो।
उदय अस्त की बात कहत हूं, सबका किया विवेका हो॥
घाटे बाढ़े सब जग दुखिया, क्या गिरही बैरागी हो।
मुनि शुकदेवा दुख के भय से, गर्भ से माया त्यागी हो॥
साँच कहूं तो कोई न पतीजे, झूठा कहा न जाई हो।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर दुखिया, जिन यह राह चलाई हो॥
राजा दुखिया परजा दुखिया, रंक दुखी विपरीती हो।
कहें कबीर सकल जग दुखिया, संत सुखी मन जीती हो॥

बहिन ! यह दुख क्यों है ? केवल इस कारण से कि संतोष नहीं है देखो ! मेरी माता मुझे हजार कष्ट दें मगर मैं दुख नहीं मानती । सदा प्रसन्न रहती हूँ ।"

गुलाब—"सत वचन बहिन ! सत वचन । देख ! तेरी छोटी बहिन बेली आ रही है । इठलाती हुई अकड़ती हुई पग पग पर उसक कमर बल खा रही है । उसको अपनी सुन्दरता पर गर्व है । रात दिन बनाव सिंगार में रहती है । घर में जब देखो दर्पण मुँह के सामने रखती है ।"

बीना—"माता के लाड़ प्यार ने उसको बिगाड़ दिया । इस बिचारी का क्या दोष है । संतान के बिगाड़ने वाले मा बाप ही होते है । यदि वह उसको पढ़ायें लिखायें, सीधो राह पर लगायें तो वह क्यों बिगड़ें, मगर वह ऐसा नहीं करते । जो माता पिता अपनी संतान को आवश्यकता से अधिक लाड़ प्यार करते है वह उनके शत्रु हैं ।"

इतने में राजकुमारी बेली वहाँ पहुँच गयी । बेली—"क्यों प्रिय बहिन बीना ! न तू घर में मिलती है न बाहर मिलती है । मैं ढूँढते ढूँढते थक गयी । घर में जब देखो तो पुस्तक सामने लगाये बैठी रहती है । यहाँ भी ज्ञान ध्यान की बातें हो रही होंगी । क्यों सच है ना ? मुझको पता लगा कि तू बाग में आई है । मैं भी तुझे ढूँढते ढूँढते यहाँ आ गई ।"

बीना—'मेरी भोली भाली बहिन ! पुस्तकों में बड़ा आनन्द है ।'

बेली—'ठीक है । तुझे तो पण्डित होना है ना ? मेरा बस चले तो तेरी पुस्तकों को उठाकर चूल्हे में फेंक दूँ । आदमी को चाहिए कि मिले जुले औरों की सुने अपनी कहे । इन कागज की पोथियों में क्या धरा है ?'

हूं। सीता अनुसुइया आदि अनेक स्त्रियों के चरित्र से मन बहलातीं हूं। पिछले स्त्री पुरुषों के बृतान्त मेरे सामने रहते हैं। बहिन ! विद्या बड़ी वस्तु है। विद्या ही स्त्री का भूषण है। विद्या न हो तो मनुष्य पशु है।'

बेली—"वाह वाह ! स्त्री को विद्या से क्या लेना है ? विद्या पढ़ें वह जिनको इनके सहारे माँगना खाना है। स्त्री को घर में रहना है। घर का काम काज करना है। मेरी माता ने कल मुझको यह जड़ाऊ कंगन दिया है। देख ! यह अच्छा है या तेरी रामायण की पुस्तक अच्छी है ?"

बीना—"मेरी रामायण की पुस्तक अच्छी है।"

बेली—"झूठ झूठ, तू झूठ बोलती है। रामायण से क्या किसी की सुन्दरता बढ़ती है।"

बीना—"हाँ सुन्दरता बढ़ती है।"

बेली—"झूठ झूठ, झूठ पानी का घूँट।"

बीना—"अभी तूने दुनियाँ नहीं देखी। तू इन बातों को नहीं समझ सकती।"

बेली—"तूने बड़ी दुनियाँ देखी होगी। यहाँ ही पैदा हुई, यहाँ ही रही। नगर से बाहर नहीं गयी और मुझसे कहती है तूने दुनिया न हीं देखी।"

बीना—"मुझे पुस्तकों ने बड़ी दुनिया दिखा दी है। मैं समझती हूं दुनिया में स्त्री जाति की क्या हैसियत है।"

बेली—"भला मैं भी तो सुनूँ।"

बीना—"सुन, जगत में स्त्री ही बल दाता, बुद्धि दाता, और अन्न दाता है। वह अपनी सन्तान की गुरु, अपने पति की सेवक और सलाहकार, सास सुसर का मान करने वाली, सबको नियम में चलाने वाली होती है। यदि उसमें विद्या नहीं है तो उसके लड़के वाले मूर्ख और अयोग्य होंगे। पति सदा

कष्ट में रहेगा। सास सुसर अलग रोते झींकते रहेंगे। सामाजिक व्यवस्था का खेल बिगड़ जायगा। स्त्री शक्ति है। जगत उसी के आधार पर है।

बेली—"तुझको बड़ी बातें आती हैं। मैं बातों में तुझसे जीत नहीं सकूँगी। डरती हूँ कि कहीं वाद विवाद और हँसी हँसो में तू बिगड़ न खड़ी हो। 'रोग की जड़ खाँसी। झगड़े की जड़ हाँसी।' ले तू जीती मैं हारी।'

बीना—"ले बेली। तू मेरी प्यारी बहिन है। आ तुझे गले लगालूँ। मुझ में तुझ में झगड़ा काहे का। चल तुझको बाग की सैर कराऊँ।"

बेली—"अच्छा चलो।"

तीनों लड़कियाँ देर तक इधर उधर फिरती रहीं। और तीनों धीरे धीरे गाती जाती हैं—

सती रहे मद माती पीव संग, सती रहे मदमाती।
पतिव्रता के एक तू, तुम बिन और न कोय।
आठ पहर निरखते रहे, सोई सुहागिन होय ॥ सती रहे०
पतिब्रता मैली भली, गले काँच की पोत ॥
सब सखियों में यों दिपे, ज्यों रवि शशि की जोत ॥ सती०
पतिव्रता पति को भजे, पति भज धरे विश्वास।
सिंह बचा जो लंघना, तो भी खाय न घास ॥ सती रहे०

लड़कियाँ टहलते टहलते उस जगह आ गईं जहाँ बँगले की दीवार पर राजा जयसिंह ने कुम्हार के सुख की नींद की बाबत कुछ शैर लिखे थे।

बेली—"बहिन ! देखो किसने क्या लिखा है ?"

बीना—"पढ़ो क्या लिखा है ?"

बेली—'मुझसे नहीं पढ़ा जाता। गुलाब ! तू पढ़।"

गुलाब ने पढ़ा:—

कोशिश करते हैं पर हमको नहीं आती है नींद ।
सौ तरह के नाज नखरे रोज दिखलाती है नींद ॥
चाक से गदहे को बांधा अरु गधे को पाँव से ।
सो रहा उसको नहीं जिनहार तरसाती है नींद ॥
लूटता है नींद का बेशक मज़ा गाफिल कुम्हार ।
बे गुमा बेफिक्र बेपरवाह को आती है नींद ॥

बीना—"यह तो किसी मूर्ख का लिखा हुआ है। सम्भव है वह कुम्हार हो। तब ही कुम्हार की नींद को प्रशंसा कर रहा है।"

बेली—"बहिन ! तू पढ़ी लिखी है। तुझसे हो सके तो इसका उत्तर लिख दे।"

बीना—"क्या जाने किसने लिखा है ? मुझे इसका उत्तर देने में संकोच है।"

बेली—"नहीं बहिन ! बातें न बना। मैं पढ़ी लिखी होती तो कभी न चूकती।"

बीना—"अच्छा ! तेरी यदि ऐसी ही इच्छा है तो खैर। मैं खड़िया मिट्टी से इसका उत्तर लिख देती हूँ।"

उसने यह शेर लिखे—

किस लिए तुझको भला इस तरह तरसाती है नींद ।
मसखरे ! सूरत को तेरे देख शरमाती है नींद ॥
तेरा लिखना कह रहा है वाकई तू है कुम्हार ।
शक नहीं मुतलक कि तुझसे सख्त घबराती है नींद ॥
होगी जिस घर में जने खुश खल्क व खुशरो पारसा ।
सोता है आराम से वह उसको बस आती है नींद ॥

बेली—"अरे ! तूने लेखक को कुम्हार बनाया ।"

प्रशंसा कैसे करता।"

बेली—"अच्छा! अब देर हो रही है। चल घर चलें। यहाँ अधिक ठहरने में माता क्रुद्ध होगी।"

सब महल की ओर चल दीं। अभी कठिनता से दस पाँच पग गई होंगी कि बेली की सखी शान्ता हांफती कांपती हुई आई। लड़कियों ने पूछा—"क्या बात हुई कि इस तरह घबराती हुई आई है।" उसने कहा—"एक स्त्री आई थी। वह चिट्ठी मुझको दे गई है। किसी को न दिखाना। पढ़ कर रख लेना। जब आऊँगी उत्तर ले जाऊँगी। मैं पढ़ी लिखी नहीं हूं। राजकुमारी बेली की खोज में थी। मैं जानना चाहती हूं कि इसमें क्या लिखा है। कौनसी आवश्यक बात है और किसने मुझको क्यों और क्या लिखा है।"

बेली—"अरी बावली! मैं तो पोथी नहीं पढ़ सकती। तेरी चिट्ठी कैसे पढ़ूँगी। बीना बहिन को दे वह पढ़ कर सुनायेगी।"

शान्ता घबराई, लजाई, मुस्कराई। कहने लगी—"जब बेली रानी से मेरा पर्दा नहीं है तो बीना देवी से क्यों छिपाऊँ लो बहिन! मेरा पत्र पढ़ दो।"

बीना पत्र को पढ़ती है :—

चन्द्र मुखी चित चोर भामिनी, मैं चकोर सेवक तेरा।
तुझ बिन व्याकुल घबराता हूँ, चित नहीं स्थिर है मेरा॥
चटक मटक तेरी भाई मन को, केश में तेरे मन लटका।
करुणा कर कृपा कर मुझ पर, मत दे दुखियों को झटका॥
रूपवती सुन्दर अति सुन्दर, कोमल चित कोमल बैना।
चरण कमल का भौंरा करले, सुन सुन सुन मेरे बैना॥
न म मन्दिर में मुझे बिठाले, घबराता हूँ मैं निश दिन।

सुधि ले मेरी मेरी रानी, कैसें काटूँ दिन गिन गिन ॥
तेरा प्रेमी दर्शनाभिलाषी
धमलू माली

चिट्ठी का पढ़ना था कि सब लड़कियाँ खिलखिला कर हँस पड़ी। वाह शान्ता ! वाह।

तू खेलती शिकार है टट्टी की आड़ में।
चूहा कोई छुपा है इस पहाड़ में ॥

शान्ता शरमाई। पत्र को फाड़ कर फेंक दिया। मुये को लाज नहीं आती। ऐसी चिट्ठी लिखता है। बस चले तो उसकी आँखें निकाल लूँ। यह मर्दुये सचमुच दीवाने होते है। इनको बुद्धि विवेक नहीं।

लड़कियाँ कुछ कहने को थीं कि इतने में किसी के आने की आहट मिली। सब सँभल गई। चुप आँख उठाकर देखती क्या हैं कि राजा रानी बँगले की ओर जा रहे हैं।

नवाँ प्रकरण

बाप, सौतेली बेटी और सौतेली माँ

सौतेली माता बुरी, ताका नहिं विश्वास।
मात मरी सुत खेद अति, गल जाये पिंजर माँस ॥

राजा रानी हाथ में हाथ दिये फूलों की बहार ले रहे हैं। उनकी दृष्टि बेला पर पड़ी जो उनको देखकर वहाँ ठहर गई थी मगर बीना सखियों को साथ लेकर शीघ्र महल की ओर चली गई थी।

रानी—"बेली ! तू अकेली यहाँ क्या कर रही है ? तुझे अकेले बाग में नहीं आना चाहिए

है तो अपने पिता जी से भी नहीं डरती है।"

रानी—"बीना किधर चली गई ?"

बेली—"उसने आप दोनों को आते हुए देखा। पहिले ठिठकी। कुछ सोचने लगी। फिर शीघ्रता से महल को ओर चली गई। मैं आपसे मिलने को इधर चली आई।"

रानी—"(राजा की ओर देखकर) क्यों जो कुछ सुना ! अब तो तुम्हारी बेटी तुमको देखकर दूर भागती है।"

राजा—"देखो रानो ! यह बात अच्छी नहीं है। जब देखो तुम बीना की शिकायत करती रहती हो। वह अनाथ है। उसकी माता नहीं है। तुमको बेली और बीना को एक दृष्टि से देखना चाहिए। तुम उसकी माता हो। जब तुम नित्य छेड़ छाड़ करती रहोगी तब तो उसका रहना कठिन है। मैंने लाखों बार तुम्हें समझाया कि छेड़छाड़ छोड़ दो मगर तुम क्या मानती हो।"

रानी—"महाराज ! मैं बदनीयती से तो कोई बात नहीं कहती। मैं तो सुधार की बात कहा करती हूँ। (बेली को सम्बोधित करके) क्यों बेली ! आज कुछ बीना कहती थी ?"

बेली—"वह तो कुछ नहीं कहती थी। हां, यह अवश्य कहती थी कि बेली ! तुम पढ़ो लिखो। विद्या स्त्रियों का भूषण है। झूँठे भूषणों पर जान न दो। पढने लिखने से बुद्धि मिलेगी। मुझको यही बात सिखा रही थी।"

राजा—"देखो रानी ! बीना कितनी अच्छी लड़की है और तुम यों ही झूठ मूठ उसके पीछे पड़ी रहती हो।"

रानी—"वास्तविक बात यह है कि आपका मन मेरी ओर से बिगड़ गया है। तुम समझते हो मैं उसकी शत्रु हूं। इसलिए मेरी बातों को उल्टी समझते रहते हो। अच्छा आज से कुछ

राजा—'खैर ! जाने भी दो। हाँ, इस समय एक बात याद आई। विजैसिंह, तेजसिंह, मानसिंह आदि के यहां से विवाह का सन्देश आया है।'

रानी—'आपने क्या उत्तर दिया ?'

राजा—'मैंने गोल माल उत्तर दिया है।'

रानी—'नहीं, स्पष्ट रूप से कहना चाहिए था कि बेलो का विवाह किसी बड़े राजा के राजकुमार से होगा।'

राजा—'कौतुकपुर का ठाकुर जिसका नाम जालिमसिंह है, आया हुआ था। विवाह पर बड़ा जोर देता था। किसी से सुन लिया है कि बेली बड़ी सुन्दर है। बस उसके मन में उसके साथ शादी करने की धुन समाई है। जालिमसिंह बड़ा निपुण रूपवान और मनचला आदमी है।

रानी—'वह सब कुछ है मगर मैं किसी ऐसे बैसे के साथ उसका सम्बन्ध न होने दूँगी।'

राजा—"जालिमसिंह का पुरोहित भी आया हुआ था। उसने भी बड़ी विनती की मगर मैं बराबर मना करता रहा।'

रानी—'जालिमसिंह तो कुल का भी ऊँचा नहीं है। लड़की को अपने से नीचे कुल में कभी न देना चाहिए। कम से कम जाति का ऊँचा तो हो। लड़की को काटकर कुये में डाल दो मगर ऐसे वैसे के साथ विवाह न करो।"

राजा—'मगर खेद की बात है कि मैंने भी अपने पुरोहित को इधर उधर भेजा था। वह यों ही फिर फिराकर चला आया। उसको वर नहीं मिला। मेरी समझ में नहीं आतो कि युवा लड़कियों को क्या करूँ। कब तक घर में बिठा रखूँ।'

रानी—'पुरोहित को फिर खोज में भेजिये। जल्दी क्या है। जब तक कोई अच्छे घर का राजकुमार न मिले तब तक धीरज के साथ प्रतीक्षा करनी चाहिए। जालिमसिंह

छोड़ दीजिये । उसको कहला दीजिये कि कई कारणों से सम्बन्ध करने में हिचकिचाहट है । यदि वह अच्छा आदमी है तो आपसे आग्रह न करेगा ।'

दोनों इस प्रकार कहते जाते थे और साथ ही साथ हँसते भी जाते थे । इतने में रानी की दृष्टि दीवार पर पड़ी । 'अरे ! दीवार पर किसने खड़िया मिट्टी से क्या लिखा है ? ऐसा तो मैंने पहले कभी नहीं देखा ।'

राजा – 'लिखने वाला मैं हूँ । कल रात नगर देखने गया था । एक कुम्हार को गहरी नींद में मस्त देखा । उसके सुख का अनुभव किया । लौटते समय स्मृति के रूप में इस घटना को यहाँ लिख दिया ताकि जब कभी इधर आऊँ और उस पर दृष्टि पड़े तो मुझे यह घटना याद रहे ।'

रानी—'यह सच है । मगर नीचे क्या लिखा है ? तनिक देखिये तो सही उसमें लिखा है कि लिखने वाला कुम्हार है ।'

राजा—'मैं नहीं जानता कि नीचे के वाक्य किसके लिखे हुए है । किसी ने मुझको चिढ़ाने के लिए लिखा है । ऐसा कौन गुस्ताख है जो मुझको चिढ़ाने का साहस करता है । बेली कुमारी ! तू कह सकती है ये किसने लिखे हैं ?'

बेली—'हाँ ! मैं कह सकती हूँ । आपकी बेटी बीना ने लिखे हैं ।'

राजा—'यदि बीना ने लिखे हैं तो गलती से लिखे हैं । उसको ज्ञात नहीं था ।'

रानी—'मैं तो कुछ कहना नहीं चाहती मगर समय पर तो बोलना ही पड़ता है । आप बीना के दोषों को टाल टूल करते रहते हैं । जब देखो हमारी बीना, हमारी बीना करते रहते हो । इतना लाड़ प्यार भी अच्छा नहीं होता । हर वस्तु ... चाहिए । अगर आज किसी दूसरे व्यक्ति

ने मेरे पति को कुम्हार कहा होता तो मैं उसकी ज़बान खिंचवा लेती मगर वह तुम्हारी बीना है। आज तुमको कुम्हार बनाया कल को चमार बनायेगी। बनो जो कुछ तुमको बनना हो।'

राजा का मुखड़ा क्रोध से तिलमिला गया। आँखें लाल हो गईं। उसने कहा कि लड़कियों के लाड़ प्यार का यही परिणाम होता है।'

रानी—"तुम हमारी बीना हमारी बीना करते रहते हो। वह तो तुमको कुछ भी नहीं समझती। उसके हृदय में आपका जरा भी मान नहीं है। बात-बात में अपनी सखियों से मूर्ख कहा ही करती थी। आज कुम्हार बना दिया। कहाँ राजा कहाँ कुम्हार! राजा हाथी पर चढ़ता है। कुम्हार गधे पर। राजा राजचक्र का मालिक है कुम्हार वर्तन के चाक का मालिक है। भली तुलना की। लीजिये महाराज चलो वर्तन भाँड़े बनाओ। वाह री बीना! तू मेरी लड़की न होती तो आज जो कर डालता सो थोड़ा था। उसको इतना भी ध्यान नहीं कि कभी राज-कुमारियां भी अपने बाप को कुम्हार बनाती हैं।'

बेली—'पिता जो! यह आपको कुम्हार बनाने वाली कौन है? इसने तो जबान खिंचवाने का काम किया है।'

राजा—'आखिर बीना गई कहां?'

बेली—'उसने आप को देखा और वह दबे पांव उड़ंच हो गई। मैंने उससे कहा—'बहन बीना! पिता जो आ रहे हैं। उसने कहा आने भी दो। मैं तो घर जाकर रामायण पढ़ूँगी। मुझे किसी से मिलकर क्या लेना है?'

राजा—'ठीक है। चोर की दाढ़ी में तिनका। तभी तो वह इतनी शीघ्र महल को भाग गई।'

राजा के क्रोध की अग्नि भड़कती जाती थी और रानी और बेली उसको भड़काते जाते थे। राजा के हृदय में

विरुद्ध तरह तरह के विचार पैदा होने लगे ।

या विधाता ! बाप मर जाये तो मर जाये लेकिन किसी लड़की की माँ न मरे । उस दीन का कोई रक्षक नहीं रह जाता जब बाप दूसरा विवाह कर लेता है तब तो यह अनाथ बेचारे बेमौत मारे जाते हैं । पाठको ! यदि तुम किसी अनाथ बालक को देखो तो उस पर दया करो—

साँचा दुख संसार में, बालक को विख्यात ।
निज माता की मृत्यु से प्रगटें सौ उत्पात ॥
सौतेलो माता बुरी, अधम पाप की खान ।
बालक का हिरदा फटे, मारे तक तक बान ॥
मात मुई बालक मुआ, मुआ सकल संसार ।
बालक दुखी के सीस पर, पड़ी अनेक कुठार ॥

दसवाँ प्रकरण

जालिमसिंह, धमलू माली और उनमें वार्तालाप

तिनका कबहुँ न रूँदिये, जो पावों तल होय ।
उड़कर आंखों में पड़े, पीर घनेरी होय ॥

राजा रायसिंह ने ठाकुर जालिमसिंह की प्रार्थना अस्वीकार की । उस स्त्रो भक्त और अज्ञानी राजा ने प्रार्थना अस्वीकार करते समय यह भी कहा कि बेली का विवाह रजवाड़े के राजा के साथ होगा । नींच कुल में उसका विवाह करना स्वीकार नहीं है । जालिमसिंह को यह बातें बुरी लगीं । वहाँ से अपने गाँव में आया और सोचने लगा कि किस तरह इस अभिमानी से अपमान का बदला लिया जाय । दो चार दिन इस पर विचार करते हुए बीत गये । एक दिन बात उसकी समझ में

आ गई। बोला यदि मैं कौतुकपुर का ठाकुर हूं और मेरा नाम जालिमसिंह है तो इस स्त्री सेवी को ऐसा नचाऊँगा कि उसे भी याद आ रहे। जिस बेलो के बारे में यह कहता है कि किसी ऊँचे कुल के राजा के यहां विवाह करूँगा उसका मैं किसी नींच से नींद आदमी के साथ ब्याह कराऊँगा। अगर ऐसा न करूँ तो मेरा नाम जालिमसिंह नहीं है।

विजयसिंह उसका मित्र था। उसको बुलाया कहने लगा—'तुमने कुछ सुना है ? रायसिंह अपनी पुत्री बेलो की शादी किसी राजा के यहाँ करना चाहता है।'

विजैसिंह—'फिर।'

जालिमसिंह—'वह कहता है कि मैं कन्या का ब्याह ऊँचे कुल में करूँगा।'

विजैसिंह—'फिर।'

जालिमसिंह—'इससे तो यह सिद्ध हुआ कि मैं नींच कुल का हूँ।'

विजैसिंह—'फिर।'

जालिमसिंह—'तू भो बावला है। फिर फिर कर रहा है।

विजैसिंह—'फिर।'

जालिमसिंह—'फिर तेरा सिर और रायसिंह की टिर।'

विजैसिंह—'कुछ प्रयोजन की बात कहो। यह तो सब मैंने सुन लिया।'

जालिमसिंह—'प्रयोजन यह है कि इस राजा को नीचा दिखाना है। जिस तरह हो सके उसके घमंड को तोड़ दूँ, तब तो बात है नही तो घोड़े की लात है।'

विजैसिंह—'वाह वा यार ! मेरे मन की बात कही। मैं भी यही चाहता हूं। किसी तरह इस मूँजो का सिर कुचल डाला जाय मगर तू अकेला है। 'अकेला चना खाक फोड़ेगा

भाड़ ।' एक से दो अच्छे होते हैं । मैं तेरा साथी हूं । जिस प्रकार हो सकेगा तेरी सहायता करूँगा ।'

जालिमसिंह—'फिर क्या करना चाहिए ?'

विजैसिंह—'पहिले चलो किसी ज्योतिषी से राय ले लें कि हमारा काज सिद्ध होगा कि नहीं ।'

जालिमसिंह—'बहुत अच्छा ।'

दोनों पण्डित उजागरमल ज्योतिषी के यहाँ पहुँचे ।

ज्योतिषी—'कहो ठाकुरो ! कैसे आये ?'

जालिमसिंह—'भाई ! एक प्रश्न करने आये हैं । बताओ कारज सिद्ध होगा कि नहीं ।'

ज्योतिषी—'ठाकुर जी ! एक टका इस हाथ में लो और एक टका उस हाथ में । तब प्रश्न करो । वैसे प्रश्न ठीक नहीं होता । दक्षिणा पहिले प्रश्न पीछे ।'

जालिमसिंह—'अच्छा महाराज ! यह लो दो टके ।'

ज्योतिषी—'बहुत अच्छा ! इसमें कुछ मीन मेख अवश्य है । राहु केतु आड़े पड़े हैं परन्तु चन्द्रमा बली है । शनिश्चर सहायक है । मंगल दायें और सूर्य बायें है । तुम्हारा काम सफल होगा । परन्तु ठाकुरो ! काम सिद्ध होने पर पाँच ब्राह्मण अवश्य जिमाना ।'

जालिमसिंह—'पाँच नहीं दस ।'

ज्योतिषी—'ठाकुरो ! प्रश्न कहता है कि किसी स्त्री से तुम्हारी आँख लड़ गई है । उसका दाव पेच खेलना चाहते हो ।'

जालिमसिंह—'सत वचन महाराज ! आपने पते की बात कही है । ज्योतिष सच्ची विद्या है ।'

ज्योतिषी—'महाराज ! अगर ज्योतिष सच न होती तो ... हमारे पास आते । कोई यों ही तो टके नहीं

दे जाता । आप के प्रश्न से यह भी विदित है कि स्त्री कोई उच्च कुल वाली है ।'

जालिमसिंह—'निःसन्देह ऐसा ही है ।'

ज्योतिषी—'बीच में कुछ विघ्न पड़ गया । तुम्हारा कुछ अपमान भी हुआ । तुम उस अपमान और निरादर का बदला भी लेना चाहते हो ।'

जालिमसिंह—'सत बचन ! लेकिन यह बताइये कि आप को सारी बातें कैसे ज्ञात हो जाती हैं ।'

ज्योतिषी—'हम क्या जानें । विद्या ऐसा कहती है । जाइये आपकी विजय है । मगर यजमान जब कार्य सिद्ध हो जाय तो हमारी सुधि लेना ।"

जालिमसिंह—'हाँ महाराज हाँ ! ये तो बताइये कि कार्य की सिद्धि में क्या यत्न किया जाय ?'

ज्योतिषी—'मेष, मीन, मिथुन, कन्या, कर्क, तुला । ठाकुर ! विद्या तो यह चाहती है कि किसी अनाड़ी द्वारा यह कार्य सिद्ध होगा । आप सहायक रहें और अनाड़ी से काम लें । ज्योतिष का सिद्धान्त है कि साँप के बिल में अपना हाथ न देना चाहिए । किसी अनाड़ी के हाथ से उसे पकड़वाना चाहिये । बस !''

विजयसिंह और जालिमसिंह ने पंडित को प्रणाम किया । उसने आशीर्वाद दिया । दोनों वहाँ से चलते हुए । राह में विचार करते जाते हैं कि ज्योतिषी ने बात तो ठीक ठीक कही है । अब काम अवश्य होगा । हाँ, रायसिंह को ऐसा खेल खिलाऊँगा कि बच्चा जीवन भर याद रक्खे । राह में देखते क्या हैं कि एक मूर्ख बड़बड़ाता हुआ आ रहा है । वह कह रहा था—

"छूमन्तर काली का जन्तर, मैं हूं ...

वीर निकालो, ब्याहूँ बेली वाली ।'

छूमन्तर, काली का जन्तर, ब्याह कुमारी रहूं स्वतंतर, सुख आनन्द उड़ाऊँ निरन्तर, फुरो ।

"मन्तर ईश्वर बाचा, जो कहे लोना चमारी सो सब साँचा ।"

जालिमसिंह और विजयसिंह दोनों हँसे । उससे पूछा "तू कौन है ?"

धमलू—"मैं कौन हूं तुम नहीं जानते ? मैं धमलू हूँ । जाति का माली हूं । जी चाहता है कि बेली राजकुमारी के साथ विवाह करूँ मगर कोई उपाय सूझ नहीं पड़ता । रानी की एक सहेली है जिसका नाम है शान्ता । इससे मैंने अपने मन की बात कही । वह मूर्ख मुझे जानती है कि मैं उस पर रीझ गया हूं । अहा हा हा ! धमलू पर स्त्रियां जान देती हैं मगर धमलू कब किसी की सुनने वाला है । वह तो बेली पर प्राण दे रहा है । देखूँ, कैसे हाथ आती है । या तो जीउँगा या उसको ही मारूँगा । अहा हा हा हा !"

जालिमसिंह और विजयसिंह मुस्कराये । मित्र ! ये तो अच्छा आदमी प्रतीत होता है । कौन जाने हमारे काम का हो । धमलू से पूछा —'तू सच्चा है या झूँठा ?"

धमलू—"सच्चा ।"

जालिमसिंह—"मर्द है या नामर्द ।"

धमलू—"मर्द ।"

जालिमसिंह—"फिर तेरा विवाह राजकुमारी से हो जायेगा ।"

धमलू—"हाँ हाँ ! बताओ किस तरह ?"

जालिमसिंह—"अजी काम करने के हजारों ढंग हैं एक दो नहीं । एक दो हों तो तुझे बताऊँ ।" केवल इतनी बात

है कि हारिये न हिम्मत बिसारिये न राम । वाही विधि रहिये जा विधि राखे राम ॥

घमलू—"बताओ ! बताओ ! जो कहोगे वही करूँगा । किसी तरह बेली मुझको मिल जाय । हा-हा हा !"

जालिमसिंह—सुन ! उतावला सो बावला । कहीं जल्दी कोई काम हुआ है कि तेरा ही हो जायेगा । हाँ, यदि तू हमारी बात मानें और हमारी सुने, तो हम एक दो नहीं सैकड़ों युक्तियाँ बतायेंगे और तेरा काम करा के छोड़ेंगे ।"

घमलू—"मैं भी यही चाहता हू, परन्तु इतना खटका है कि मैं जाति का माली हूँ । माली अधम जाति है । कौन जाने राजकुमारी मुझे देख कर नाक भौं सिकोड़े ।"

जालिमसिंह—'यह नहीं, ऐसा न सोच । मैं अनेक युक्तियाँ जानता हूं । जल्दी आम का फल नहीं पकता । सब काम में देर लगती है । अगर तू हमारी राय पर चले तो तेरा काम करादें ।

घमलू—"वही तो कहता हूं कि बताइये । चूल्हे में कहो सर दे दूँ । भाड़ में कहो कूद पड़ूँ । पहाड़ से चाहो गिर पड़ूँ । समुद्र में डूब मरूँ । ओखली में सर दे दूँ । जो कुछ कहो सब करने पर तैय्यार हूँ । पहले आप बताइये तो सही कि यों ही बकवाते हैं ।"

जालिमसिंह—"सुन, किसी से कहना नहीं क्योंकि कहने की बात नहीं है । हमारे साथ चल । तुझको खूब खिलायेंगे पिलायेंगे । जब तू मोटा ताजा हो जायेगा तो अच्छे अच्छे वस्त्र आभूषण पहनायेंगे । तुझको जोधपुर का राजकुमार मशहूर करेंगे । सेना साथ रहेगी । हम सब लोग तेरी अर्दली में चलेंगे । जब बेली का बाप राजा रायसिंह सुनेगा, तुझसे मिलने आयगा । उस समय विवाह की बातचीत हो जायगी । लेकिन तू किसी से कुछ बोलना नहीं । जो ...

उतना ही कहना, वरना तेरी बात चीत सुनकर अगर कहीं वह भाँप गये तो फिर भेद खुल जायगा। किया कराया सब एक तरफ धरा रह जायगा। तुझको हमारी राय पर चलना होगा। बोल, यह स्वीकार है कि नहीं ?"

धमलू—"हाँ, स्वीकार है। हा हा हा ! बेली को ब्याहूंगा। अपना भाग सराहूँगा। तुम्हारा यश मनाऊँगा। दिन प्रति दिन गुन गाऊँगा। बनूँगा मैं राजा। हा-हा-हा-हो, हो हो ! बस इतनी बात है। लीजिये चलिये। आपके साथ हूं। हा-हा-हा।"

जालिमसिंह—"हम इसका प्रबन्ध कर लेंगे, लेकिन तू हमको यह बतादे कि शांता तेरी सूरत से परिचित है कि नहीं।"

धमलू—"हूँ कुछ जानती तो है लेकिन इसकी कुछ परवाह नहीं। मैं इससे निबट लूँगा। आप न घबरायें।"

इस वार्तालाप के बाद जालिमसिंह और विजैसिंह धमलू को कोतुकपुर ले गये। जैसा वायदा किया था, उसका बनाव शृंगार करने लगे।

ग्यारहवाँ प्रकरण

बाप, बेटी आदि

॥ मनुष्य बनो ॥

बीना "लिखने वाली अपराधिनी मैं हूँ।'

राजा—"तूने क्या लिखा था ?'

बीना—'आप तो उसको पढ़ ही चुके हैं। मुझसे क्यों पूछते हैं।'

राजा—'फिर भी मैं तेरी जुबान से सुनना चाहता हूं।'

बीना—'उसमें लिखा हुआ था कि कुम्हार सुख को नींद सोता है। उसकी नींद की प्रशंसा की गई थी।'

राजा—'फिर क्या ?'

बीना—'मैंने उसके नीचे यह लिख दिया कि जिसके घर में अच्छी और नेक आदत वाली स्त्री होती है, उसको नींद आती है।'

राजा—'तेरी जानकारी में कुम्हार को सुख की नींद प्राप्त नहीं होती।'

बीना—'निस्संदेह ! जो व्यक्ति सुबह से उठकर मिट्टी खोदता है, उसको गूँधता है, वर्तन बनाता है पंजावा लगाता है वर्तन बनाकर शहर में बेचता है, लोग उसको अनादर को दृष्टि से देखते हैं, उसको सुख क्या मिलेगा और वह क्या सुख नींद सोयेगा ?'

राजा—"मगर उसको राज काज की तो चिन्ता नहीं। मामूली काम काज किया, खा पीकर शांति के साथ सो रहा।'

बीना—चिन्ता क्यों नहीं है ? सुबह से लेकर शाम तक गधे की तरह कष्टों से लदा रहता है। स्थूल काम करता है। वर्तन के बेचने की चिन्ता रहती है। बर्तन बासन न बिके तो चिन्ता, टूट फूट जाँय तो फिकर। यदि अच्छे मूल्य पर न बिके तो चिन्ता। उसको हजार तरह की चिन्तायें हैं। मैं नहीं समझ सकती कि ऐसे चिन्तित को सुख पाने का क्या अधिकार है।'

—शेष अगले अंक में

तुम कौन हो ?

कल्पित व्यक्तित्व की हैसियत से भी तुम उसी ब्रह्म में रहते हुये विभिन्न प्रकार के संशय भ्रमों का गोरख धन्धा मचाते रहते हो। अलग तो उससे एक क्षण के लिए भी नहीं हो। कौनसी बूँद है जो समुद्र से अलग है ? एक भी नहीं नजर जब तक बूंद पने का खयाल है तब तक पूरा भ्रम है। इस एक कल्पित बूँद के पीछे समुद्र की पूरी शक्ति रहती है। यह तुम जानते हो। केवल सोचने की देर है। गुरु नानक साहब ने यही एक बात समझाने के लिये मानव चोला धारण किया था बर्ना यह बात तुम कैसे समझते ! गुरु ने प्रगट होकर सार भेद और सार-ज्ञान का पर्दा उठा दिया। उनका कार्य तो पूरा हो गया। हाँ, अब तुम अपने कर्त्तव्य का पालन करो। उनकी वाणी सुनो और सुनकर उसे सोचो, विचारो और बस ! तुरन्त भ्रमों की जड़ कटी हुई है।

उपनिषदों की गाथा सुनो –

प्रथम खण्ड

१—नारद सनत्कुमार के पास आये। कहने लगे—"भगवन ! मुझे उपदेश दो।" सनत्कुमार ने कहा – "जो कुछ तुम जानते हो, वह मुझको सुना दो। तब मैं इससे आगे तुमको बताऊँगा।

२—नारद ने कहा—"भगवन ! मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण, पितृ कर्म, गणित शास्त्र, निधि-ज्ञान, वाको वाक्य, अकायन, देव विद्या, भक्ति विद्या, पाँचों तत्वों की विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या, सर्वद्वीपन विद्या वह सब मैंने पढ़ा है।"

३—भगवन ! मैं केवल मंत्रों को जानता हूं, ग्रन्थों के पाठ का ज्ञाता हूं, आत्मा को नहीं जानता। मैंने सुन रक्खा है कि आप ऐसे महात्माओं में से हैं जिनकी सहायता से दुनिया के सताये हुये प्राणी भव दुख से पार हो जाते हैं। भगवन ! मुझे भी आप दुख से पार करें।

सनत्कुमार ने कहा—"तुमने जो कुछ पढ़ा है यह केवल 'नाम' है। शब्द मात्र है।"

४—नाम ही ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम वेद, अथर्ववेद, पाँचवां इति-हास, पुराण, वेदों का वेद, पितृ कर्म, राशि (गणित शास्त्र) दैव (भाग्य विधान) निधि (ज्ञान), वाको वाक्य (तर्क शास्त्र), अकायन (नीति-शास्त्र) देव विद्या (धनुर्वेद), ब्रह्म विद्या, भूत विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या (ज्योतिष) सर्प देव जन (गान्धर्व सांगीत) की विद्या यह सब नाम ही हैं। नाम ही की तुम उपासना करो।

५—वह जो नाम की ब्रह्म के तौर पर उपासना करता है, जहां तक नाम की समझ है, वहां तक उसकी इच्छा के अनुसार होता है। जो नाम की ब्रह्म की तरह उपासना करता है। नारद ने पूछा—"भगवन ! क्या नाम से भी कुछ अधिक है ?" सनत्कुमार ने कहा—"हां, नाम से अधिक है।" नारद ने कहा—"भगवन ! वह मुझे बताइये।"

द्वितीय खण्ड

१—वाणी नाम से भी बढ़कर है। यह वाणी है, जो इन सबको पूरा २ बताती है। ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, पाँचवाँ इति-हास, पुराण, वेदों का वेद, पितृ कर्म, राशि, दैव, निधि, वाकोवाक्य, अकायन, देव विद्या, ब्रह्म विद्या, भूत विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या, सर्प देव जन की विद्या, द्यौ, (लोक) पृथ्वी, वायु और आकाश जल तेज और मनुष्य, पशु, पक्षी, तृण, वनस्पति, हिंसक पशु, कीड़े मकोड़े, चींटी, धर्म अधर्म, सत्य और असत्य, भला बुरा, राग द्वेष को वाणी ही बतलाती है। यदि वाणी न होती तो न धर्म जाना जाता न अधर्म, न सच न झूठ, न बुरा न भला, न राग न द्वेष जाना जाता। वाणी ही इन सबको समझाती है। तू वाणी की उपासना कर।

२ – वह जो ब्रह्म की तरह वाणी की उपासना करता है इसके लिए जहाँ तक वाणी की पहुंच है वहाँ तक इसकी इच्छा के अनुसार काम होता है। जो वाणी की ब्रह्म की तरह उपासना करता है। नारद ने पूछा—"भगवन ! वाणी से बढ़कर कोई वस्तु है ? सनत्कुमार ने कहा—"हाँ, वाणी से बढ़ कर है।" नारद बोले—"भगवन ! मुझे उसे बताइये।"

तृतीय खण्ड

१—मन वाणी से बढ़ कर हैं क्योंकि जिस तरह बन्द मुट्ठी दो आंवले या दो बेर या दो बड़े हड़ को जान लेती है उसी तरह मन, नाम और वाणी इन दोनों को जानता है। जब कोई मनन करने वाला मन से विचारता है कि मन्त्रों को पढ़ूँ तब वह पढ़ता है। वह विचार करता है कि कर्म करूँ तब वह कर्म करता है। जब सोचता है कि संतान और पशु की इच्छा करूँ, तब वह इनको चाहने लगता है। मन निस्सन्देह आत्मा है। मन ही लोक है। मन ब्रह्म है। तू मन की उपासना कर।

२—वह जों मन की उपासना करता है, जहां तक मन की पहुंच हैं वहाँ तक इसकी इच्छा के अनुसार काम होता है। जो ब्रह्म की तरह मन की उपासनेा करता है। नारद ने कहा—"क्या मन से बढ़कर भी कुछ है ?" "हाँ, है।" "भगवन ! मुझे बताइये।"

चतुर्थ खण्ड

१—संकल्प मन से बढ़कर है क्योंकि जब मनुष्य संकल्प करता है तब वह सोचता है तब वाणी को प्रेरणा करता है और वह इसको नाम में गति देता हें। नाम में मन्त्र एक हो जाते हैं और मन्त्रों में कर्म।

२—यह सब (कर्म आदि) संकल्प या इच्छा शक्ति के आश्रित हैं। यह संकल्प सरूप हैं और संकल्प में रहते हैं। द्यौ लोक और पथ्वी लोक — —े हैं। वायु और आकाश संकल्प कर रहे हैं। जल और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

तेज संकल्प कर रहे हैं । संकल्प से वर्षा संकल्प वाली होती है । वर्षा के संकल्प से अन्न संकल्प वाला होता है । इनके संकल्प से प्राण संकल्प वाले होते है । प्राणों के संकल्प से मन्त्र संकल्प वाले होते हैं । मन्त्रों के संकल्प से कर्म संकल्प वाले होते हैं । कर्मों के संकल्प से लोक सकल्प वाले होते हैं । लोक के संकल्प से प्रत्येक वस्तु संकल्प वाली होती है । यह संकल्प (की शक्ति) है । तुम संकल्प की उपासना करो ।

३—वह जो सकल्प की ब्रह्म की तरह उपासना करता है वह निश्चल प्रतिष्ठा वाला और दुख से रहित होकर इन लोकों को प्राप्त करता है जो संकल्प वाले हैं, प्रतिष्ठान वाले हैं और दुख से मुक्त हैं । जहां तक संकल्प की पहुँच है वहां तक इसकी इच्छा के अनुसार क म होता है । जो संकल्प की ब्रहम की तरह उपासना करता है । नारद— भगवन ! क्या संकल्प से बढ़कर भी कोई वस्तु है ?" "हां, संकल्प से बढ़कर है ।" 'वह मुझको समझाइये ।'

पांचवाँ खण्ड

१—चित संकल्प से बढ़कर है क्योंकि जब कोई पुरुष सोचता है तब वह उसका संकल्प करता है, फिर मनन करता है तब वाणी को गति देता है । फिर उस वाणी को नाम में गति देता या प्रेरित करता है । नाम में मन्त्र एक हो जाते हैं और मन्त्रों में कर्म एक हो जाते हैं ।

२—ये सब (संकल्प से लेकर कर्म तक) चित्त के आश्रित हैं, चित्त रूप हैं, चित्त में रहते हैं । इसलिये यदि कोई आदमी चित्त सोचने से रहित हो जाता है तो उन्मत्त हो जाता है । चाहे वह बहुत कुछ जानता भी हो, तब भी लोग उसको ऐसा (अचित्त) कहते हैं लेकिन यदि कोई पुरुष चैतन्य है तो चाहे वह थोड़ा भी जानता हो तो लोग इसको सेवने लगते हैं क्योंकि चित्त इन सबका आश्रय है । यह सब चित्त रूप हैं, चित्त में रहते हैं । तुम इसकी उपासना करो ।

वह जो चित्त की ब्रह्म की तरह उपासना करता है वह स्वयं दृढ़ ध्रुव प्रतिष्ठा वाला और दुख से मुक्त हुआ उन लोगों को प्राप्त करता है जो चेतनावन्त, अटल प्रतिष्ठा वाले और दुख से मुक्त हैं। जहां तक इसका काम इसकी इच्छा के अनुसार होता हैं जो चित्त की ब्रह्म तरह उपासना करता है। नारद ने कहा—'भगवन ! चित्त से बढ़कर भी कोई वस्तु है ?' सनत्कुमार —'हां, चित्त से बढ़कर हैं।" नारद— "भगवन ! मुझे बताइये।"

छटवां खण्ड

१—ध्यान चित्त से बढ़कर है। यह पृथ्वी ध्यान में रहती है और इसी तरह अन्तरिक्ष, द्यौ (सौर लोक)। जल, पर्वत ध्यान में रहते हैं। देवता और मनुष्य ध्यान में लगे हुए हैं। इस कारण वह लोग जो यहां मनुष्यों की महत्ता को प्राप्त करते हैं तो वह निस्सन्देह ध्यान का कुछ भाग लिये हुए दिखाई देते हैं। थोड़े बहुत ध्यान से ही वे बड़ाई पाते हैं। जो छोटी श्रेणी के आदमी हैं वह लड़ाई झगड़े, चुगलखोरी और निन्दा करने वाले होते हैं और जो ऊँची श्रेणी के मनुष्य हैं वह ध्यान के फल का कुछ भाग लिये हुए दिखाई देते हैं। तुम इस ध्यान की उपासना करो।

२—वह जो ध्यान की ब्रह्म की तरह अपासना करता है जहां तक ध्यान की पहुँच है वहां तक इसका काम इसकी इच्छा के अनुसार होता है, जो ध्यान की ब्रह्म की तरह उपासना करते हैं। नारद—'भगवन ! क्या ध्यान से बढ़कर कोई वस्तु है ?' 'हां, ध्यान से बढ़कर है।' 'भगवन ! वह मुझको बताइये।

सांतवां खन्ड

१—विज्ञान (यथार्थ ज्ञान) ध्यान से बढ़कर हैं। विज्ञान द्वारा मनुष्य ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद, चतुर्थ अथर्ववेद, पाँचवें इतिहास, ( ) पितकर्म, राशि, देव (भाग्य वि ज्ञान),

निधि (खान), बाको वाक्य (तर्क शास्त्र), एकायन, देव विद्या, ब्रह्म-विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या, सर्प और देवजन [गायन] की विद्या, द्यौ और पृथ्वी, वायु और आकाश, जल और तेज देवता और मनुष्य, पशु और पक्षी, तृण वनस्पति, हिंसक जीव, कीड़े मकोड़े, चींटी धर्म व अधर्म, सच झूँठ, अच्छा बुरा, अनुकूल, प्रतिकूल, अन्न और रस, लोक परलोक इनको मनुष्य विज्ञान द्वारा ही जानता है। तुम विज्ञान की उपासना करो।

२—वह जो विज्ञान की ब्रहम की तरह उपासना करता है वह विज्ञान वाला होता है और विज्ञान वाले लोकों को प्राप्त करता है। जहाँ तक विज्ञान की पहुँच है वहां तक इसका काम इसकी इच्छा के अनुसार होता है, जो विज्ञान को ब्रहम की तरह उपासना करते हैं। नारद—'भगवन ! क्या विज्ञान से भी बढ़कर (कुछ) है ?' 'हां, विज्ञान से बढ़कर है।' 'भगवन ! वह मुझको बताइये।'

आठवां खण्ड

१—बल विज्ञान से बढ़कर है एक बलवान पुरुष सौ विज्ञान वाले पुरुषों को कम्पा देता है। जब कोई पुरुष बल वाला होता है तो वह परिश्रमी होता हैं। जब परिश्रमी होता है तो वह गुरु की सेवा के योग्य होता हैं। जब वह सेवा करता है तो इनके समीप होता है। जब समीप होता है तो वह द्रष्टा, श्रोता, सोचने वाला, तत्व ज्ञाता, सत्कर्म कर्त्ता और समझाने वाला बन जाता है। बल से पृथ्वी खड़ी है। बल से अन्तरिक्ष, द्यौ, पर्वत, देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, वनस्पति, हिंसक जीव, कीट, पतंग तथा चीटियाँ (सब बल से खड़े हैं) लोक बल से खडा है। बस तुम बल की उपासना करो।

२—जो बल की ब्रह्म की तरह उपासना करता है। जहां तक बल की पहुंच है वहां तक इसका काम इच्छा के अनुसार होता हैं। हां, जो बल की ब्रहम की तरह उपासना करता हैं। नारद—"भगवन !

बल से बढ़कर कोई वस्तु है ?' 'हाँ, बल से बढ़ कर है।' 'तब भगवन ! वह मुझको बताइये।'

नवां खण्ड

१ अन्न ही बल से बढ़ कर है (क्योंकि अन्न बल का कारण है)। इस कारण यदि कोई व्यक्ति दस दिन तक कुछ न खाय (और यदि जीवित रहा तो बल में कमी हो जायगी अर्थात अदृष्टा, अश्रोता, अकर्त्ता अविज्ञाता हो जाता है। उसमें ज्ञान, मनन नहीं रहता,) अन्न खाने से वह देखने, सुनने, मानने, जानने, काम करने और समझने वाला बन जाता है। इसलिये तुम अन्न की उपासना करो।

२—वह जो अन्न की ब्रह्म की तरह उपासना करता है अन्नमय लोक को पाता है। जहाँ तक अन्न की पहुंच है वहां तक उसकी इच्छा के अनुसार काम होता है। हां, जो अन्न की ब्रहत की तरह उपासना करता है—"भगवन ! अन्न से भी बढ़ कर कुछ है ?" "हां, अन्न से बढ़कर हैं।" "भगवन ! वह मुझको समझाइये।"

दसवां खण्ड

१ - जल ही अन्न से बढ़ कर है। इसलिये जब अच्छी तरह वर्षा नहीं होती तब प्राण दुखी होते हैं कि अब अन्न थोड़ा होगा। लेकिन यदि वर्षा अच्छी हो प्राण को सुख मिलता है कि अन्न विशेष होगा। जल ने ही विभिन्न रूप धारण कर रक्खे हैं। पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ लोक पर्वत, देव, मानव, पशु, पक्षी, वनस्पति, हिंसक जीव, कीड़े मकोड़े जल ने ही यह विभिन्न रूप धारण कर रक्खे हैं। अतः जल की उपासना करो।

२—वह जो जल की ब्रहम की तरह उपासना करता है वह समस्त मनोरथों की पूर्ति कर लेता है। वह तृप्तिमान हो जाता है। जहाँ तक जल की पहुँच है। वहां तक इसकी इच्छा के अनुसार काम होता है। हाँ, जल की ब्रहम की तरह उपासना करता हैं। "भगवन ! जल से

बढ़कर भी कोई वस्तु है ?" "हां, जल से बढ़ कर है।" "भगवन ! वह मुझे बताइये।"

ग्यारहवां खण्ड

१—तेज (अग्नि) जल से बढ़कर है क्योंकि अग्नि वायु से मिलकर आकाश को तपाती है. तब लोग कहते हैं बहुत तप रहा है वर्षा होगी। अग्नि (अपने आपको) दिखलाकर तब जल को बनाती है। तब फिर ऊपर और चारों ओर चमकती हुई बिजलियों के साथ बादल की गर्ज पैदा होती है। तब लोग कहते हैं चमकता है. गर्जता है, बर्षेगा। अतः यह अग्नि (बिजली के रूप में) अपने आपको दिखाकर जल बरसाती है-। अतः तुम अग्नि की उपासना करो।

२—वह जो अग्नि की ब्रह्म की तरह उपासना करता है वह स्वयं तेजस्वी होकर इन लोकों को प्राप्त करता है जो तेज वाले हैं, प्रकाशवान है और अँधेरे से रहित हैं। जहां तक अग्नि की पहुँच है इनका कार्य इच्छानुकूल होता है जो अग्नि की ब्रह्म की तरह उपासना करते हैं। " नारद—"भगवन ! अग्नि से भी बढ़कर कोई वस्तु है ?" "हां, 'वह मुझे बताइये।'

बारहवां खण्ड

१—आकाश ही तेज (अग्नि) से बढ़कर है क्योंकि सूर्य और चन्द्रमा, बिजली और तारागण सब आकाश में स्थित हैं। आकाश के कारण मनुष्य बोलता है। आकाश के द्वारा मनुष्य सुनता है। आकाश के द्वारा शब्द जाता है। आकाश में (जब किसी से मिलाप होता है) क्रीड़ा करता है। आकाश में (जब किसी से वियोग होता है) क्रीड़ा नहीं करता। आकाश में सब पदार्थ उत्पन्न होते हैं। अतः तुम आकाश की उपासना करो।

२ – वह जो आकाश की ब्रह्म की तरह उपासना करता है वह आकाश वाले लोकों को प्राप्त करता है जहाँ कोई दबाव नहीं है और

जो खुले और विस्तृत हैं । जहाँ तक आकाश की पहुंच है वहाँ तक इसके काम इच्छा के अनुकूल होते हैं जो आकाश की ब्रह्म की तरह उपासना करता है ।

क्यों भगवन ! "आकाश से बढ़कर कोई वस्तु है ?" "हाँ, आकाश से बढ़कर वस्तु है" 'भगवन ! वह मुझे बताइये ।"

तेरहवाँ खन्ड

स्मरण शक्ति आकाश से भी बढ़कर है । क्योंकि किसी जगह बहुत से आदमी बैठ जांय और एक दूसरे की बात को स्मरण न रक्खें तो वह कुछ न सुन सकते हैं और न मनन कर सकते हैं, न जान सकते हैं । जब वह स्मरण रखते हैं तब ही मान सकते और जान सकते हैं । मनुष्य स्मरण शक्ति ही की सहायता से पुत्रों को जानता है । पशुओं को भी जानता है । बस तुम स्मरण शक्ति की उपासना करो ।

२—वह जो स्मरण शक्ति को ब्रह्म की तरह उपासना करता है, जहाँ तक स्मरण शक्ति की पहुंच हैं, इसका कार्य इच्छानुकूल होता है । "भगवन ! क्या स्मरण से बढ़कर भी कोई वस्तु है ?" "हां, है ।' "भगवन ! वह मुझे बताइये ।"

चौदहवाँ खंड

१---आशा स्मरण से भी बढ़कर है । आशा से पोषण होकर स्मरण शक्ति मन्त्रों को पढ़ती है । कर्म (यज्ञ आदि) करती है । लोक और परलोक को चाहती है । अतः तुम आशा की उपासना करो ।

२—वह जो आशा की ब्रह्म की तरह उपासना करता है, आशा के द्वारा इसकी सब वासनायें पूरी होती है । इसकी प्रार्थनायें व्यर्थ नहीं जाती हैं । जहां तक आशा की पहुंच है, वहां तक इसका काम इच्छा के अनुकूल होता है । "जो आशा से बढकर है भगवन ! वह मुझको बताइये ।"

पन्द्रहवाँ खंड

... बढ़कर है । जैसे रथ की धुरी में अरे पिराये

रहते हैं। प्राण प्राण से मिलता है। प्राण प्राण को देता है। प्राण पिता है, प्राण माता है, प्राण भाई है, प्राण बहिन है, प्राण गुरु है। प्राण ही ब्राहमण है।

२—क्योंकि कोई व्यक्ति, मां, बाप, भाई, बहिन या गुरु को अनुचित बात कहदे तो लोग कहते हैं कि तुझको धिक्कार है। तू पितृ घातक है, मात्र घातक है, भ्रातृ घातक है, बहिन का घातक है, आचार्य घातक है, ब्राहमण घातक है।

३—मगर जब इनके प्राण निकल गये तब चाहे कोई लकड़ी इकट्ठा करके जला देवे, तब कोई उसको कुछ नहीं कहेगा कि तूने बाप, मां, भाई, बहिन या गुरु का घात किया है।

४—अतः यह सब (मां बाप आदि) प्राण ही हैं। जो इस तरह देखता है, मानता है, समझता है वह यथार्थ वक्ता होता है। यदि उससे प्रश्न किया जाय कि क्या तू यथार्थ वक्ता है? तो वह कहेगा कि मैं यथार्थ वक्ता हूं। इससे वह इन्कार न करेगा।

सोलहवाँ खंड

१—इसके आगे नारद ने कुछ नहीं पूछा। वह सन्तुष्ट हो गया तब सनत्कुमार ने अधिकारी जान कर कहा कि वास्तव में यत्रार्थ वक्ता वह है जो सत्य ब्रहम को सबसे बढ़ कर कहता है। [नारद] "हां, भगवन! मैं सत्य को जानना चाहता हूँ।"

सत्रहवाँ खंड

१—जब कोई व्यक्ति सत्य को जानता है तब वह सत्य कहता है। जो सत्य को जानता नहीं है वह सत्य को नहीं बतलाता। केवल वही जो सत्य को जानता है सत्य कहता है। बस! हमको विज्ञान जानना चाहिये। "भगवन! विज्ञान को जानना चाहता हूँ।"

अठारहवां खंड

करता वह नहीं जानता। अतः हमको मनन करने की खोज होनी चाहिये। 'भगवन ! मैं मनन (मति) को जानना चाहता हूँ।'

उन्नीसवाँ खण्ड

१—जब किसी पुरुष में श्रद्धा होती हैं, तब वह उसका मनन करता है। जिसमें श्रद्धा नहीं है वह मनन नहीं करता। अतः हमको श्रद्धा को जानना चाहिये। 'भगवन ! मैं श्रद्धा को जानना चाहता हूँ।'

बीसवां खण्ड

१—जब कोई व्यक्ति निष्ठा वाला [गुरु परायण] होता है तब वह श्रद्धा वाला बनता है। वह जो निष्ठा वाला नहीं है श्रद्धा वाला नहीं होता। केवल वही श्रद्धा वाला नहीं होता। जो निष्ठा को जानना चाहता है। निष्ठा ही जानने योग्य है।

इक्कीसवाँ खण्ड

१—जब कोई व्यक्ति अपने कर्त्तव्य को पूरा करता है तब वह निष्ठा वाला होता है। वह जो अपने कर्त्तव्य को पूरा नहीं करता निष्ठा वाला नहीं बनता। इसलिये हमको कर्त्तव्य की जिज्ञासा होनी चाहिये, 'भगवन ! मैं कर्त्तव्य को जानना चाहता हूं।'

बाईसवाँ खण्ड

जो व्यक्ति कर्त्तव्य करके सुख पाता है वह कर्त्तव्य को पूरा करता है। जो [अपने में] सुख नहीं पाता वह कर्त्तव्य नहीं करता। अतः हमको सुख की जांच करनी चाहिये।

तेईसवां खण्ड

१—जो भूमा है वही सुख है। (पूर्ण पुरुष को भूमा कहते हैं) अल्प ... नहीं है। केवल 'भूमा' में ही सुख है। 'भूमा' ही जानने की

चौबीसवाँ खण्ड

१—जिस अवस्था में पुरुष न किसी और वस्तु को देखता है न अन्य शब्द को सुनता है, न अन्य पदार्थ को जानता है वह 'भूमा' नहीं है। 'भूमा' अमृत है, अल्प मृत्यु (मरने वाला) है।

२—नारद ने कहा—'भगवन ! 'भूमा' किस में स्थित है ?''

३—सनत्कुमार ने उत्तर दिया—"अपनी महिमा में स्थित है।" संसार में लोग गाय घोड़े हाथी आदि सबकी महिमा का गीत गाते हैं। मैं ऐसा नही कहता क्योंकि ऐसा कहने में स्वामी (अपने साम्राज्य) में आश्चर्य लेता है और द्वैत हो जाता है। 'भूमा' सिवाय अपने और किसी में स्थिति नहीं है किन्तु मैं यह कहता हूं कि—

पच्चीसवाँ खण्ड

१—वही भूमा नीचे है ऊपर है, आगे है पीछे है, दांये है और बांये है। वही सब कुछ है। अब इससे आगे अहं का आदेश है। मैं ही नीचे हूं। मैं ऊपर हूं। मैं पीछे हूं, मैं सामने हूँ। दांये बांये हूं। मैं ही सब कुछ हूँ।

२—अब (इस भूमा का) आत्म आदेश है। आत्मा ही नीचे है। आत्मा ही ऊपर है। आत्मा ही पीछे है। आत्मा ही सामने है आत्मा ही दांये बांये है। आत्मा ही सब कुछ है। जो इस तरह देखता हुआ, मनन करता हुआ और जानता हुआ आत्मा में प्रेम रखता, आत्मा में खेलता, आत्मा के साथ जुड़ा होता, आत्मा में आनन्द भोगता, वह स्वराट (मालिक) बन जाता है। उसका सब लोकों में अधिकार होता है। (अर्थात सब में प्रवेश होकर इनका मालिक बन जाता है) मगर वह जो भिन्न रूप से जानते हैं वह नाशवान लोकों में रहते हैं। और वहां इन पर दूसरे राज करते हैं। इनको किसी लोक में स्वतंत्रता नहीं मिलती।